ओ३म्

महर्षि

पाणिनि-प्रभा

सृष्टि संवत् १,९७,२९,४९,११३	संयुक्तांक जनवरी – मार्च, २०१२	वर्ष ६, अंक–१	माघ–चैत्र, वि.सं. २०६९

सम्पादिका
आचार्या नन्दिता चतुर्वेदी
मो०- 9235539740

◆

सहसंपादिका
डा० प्रीति विमर्शिनी
मो०- 9235604340

◆

प्रकाशक
पाणिनि कन्या महाविद्यालय
पो०- महमूरगंज, तुलसीपुर,
वाराणसी– 221010 (उ0प्र0)
फोन : (0542) 6452340
6544340

◆

पत्रिका मूल्य
एक प्रति : 25/-
वार्षिक : 150/-
आजीवन : 1500/- (दस वर्ष)

प्रभा–रश्मयः

1. **वेद-वाणी–** सच्चा तीर्थ क्या है? – आचार्या नन्दिता चतुर्वेदी 2–4
2. **सम्पादकीयम् –** शास्त्रार्थ का रूप लेता वृत्तान्त – आचार्या नन्दिता शास्त्री 5–10
3. **निरीक्षणम् –** – डा. प्रतिभा पुरन्धि 11–12
4. **ब्राह्मण! सावधान –** – डा. सम्पूर्णानन्द 13-19
5. **वेदों की ओर लौटो –** – पं0 सूर्यबली पाण्डेय 20–25
6. **महिला सशक्तीकरणं राष्ट्रस्य विकासश्च –** – सञ्जीवनी आनन्द 26–27
7. **स्वतन्त्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका –** आशा रानी व्होरा 28–31
10. **सामान्य रोगों की सुगम चिकित्सा –** – डा. अजीत मेहता 32–36
11. **हम भारत से क्या सीखें –** – प्रो. मैक्समूलर 37–38
12. **पाणिनि कन्या महाविद्यालय में सहयोग करने का प्रकार –** –39
13. **पाणिनि कन्या महाविद्यालय एक परिचय एवं प्रवेश के नियम–** –40

यह पत्रिका sangamanee.com पर आनलाईन उपलब्ध है।

◆

वेद-वाणी

सच्चा तीर्थ क्या है?–

ओं व्रतं कृणुताग्निर्ब्रह्माग्निर्यज्ञो वनस्पतिर्यज्ञियः। दैवीं धियं मनामहे सुमृडीकामभिष्टये वर्चोधां यज्ञवाहसं सुतीर्था नोऽअसद्वशे। ये देवा मनोजाता मनोयुजो दक्षक्रतवस्ते नोऽवन्तु ते नः पान्तु तेभ्यः स्वाहा।।

(यजु. 4/11)

यह यजुर्वेद का मन्त्र है। यजुर्वेद कर्म का वेद है और सभी कर्मों में श्रेष्ठतम कर्म यज्ञ है। इस मन्त्र में यज्ञ का आधार जो अग्नि है उसे ब्रह्म कह कर उसके महत्व को प्रदर्शित किया है और यज्ञ को जीवन का व्रत बनाने के लिये प्रेरित किया है। साथ ही उस श्रेष्ठतम कर्म के लिये दिव्य बुद्धि की याचना और उसकी विशेषता की ओर इङ्गित किया है।

मन्त्रार्थ इस प्रकार है– हे मनुष्यो! **व्रतं कृणुत** व्रत करो, क्या? कि हम प्रतिदिन यज्ञ करेंगे, क्यों? क्योंकि **अग्निर्ब्रह्म** अग्नि ही ब्रह्म है आराध्य है यही हमें आगे बढ़ाने वाला है। बृह वृद्धौ धातु से यह ब्रह्म शब्द बनता है। एक अन्य मन्त्र में भी **आर्यस्य वर्धनम् अग्निम्** (साम. 47) अग्नि बढ़ाने वाला है यह कहा है किसका? तो यज्ञ करने वाले जो आर्यजन हैं उनका। प्रस्तुत मन्त्र में भी अग्नि ब्रह्म है कहने के बाद वह अग्नि क्या है किंनिमित्तक है? तो आगे स्पष्ट कर दिया **अग्निर्यज्ञः** वह अग्नि यज्ञ है यज्ञरूप है। वह यज्ञ कैसे सम्पन्न होता है तो इसका भी उत्तर आगे दे दिया कि **वनस्पतिर्यज्ञियः** अर्थात् जंगलों में पैदा होने वाली ओषधियाँ तथा उनका स्थूल भूत काष्ठ रूप समित् ही यज्ञ के योग्य है। शास्त्रों में **फली वनस्पतिर्ज्ञेयः** अर्थात् जो फल वाले वृक्ष हैं उन्हें वनस्पति कहा है यह इस मन्त्र का एक भाग हुआ। अग्नि को वेदों में व्रतपति, व्रतपा कहा है अर्थात् अग्नि हमारे व्रत की रक्षा करने वाला है। ब्रह्मचारी गृहस्थी वानप्रस्थी संन्यासी जो भी हैं यही उन सबकी मर्यादाओं का रक्षक है।

मन्त्र के द्वितीय भाग में यज्ञ कौन कर सकता है यज्ञ के द्वारा अभीष्ट सिद्धि के लिये हम किसकी कामना-याचना करें तो बताया इसके लिये– **दैवीं धियं मनामहे** हम दिव्य बुद्धि की याचना परम प्रभु से करें क्योंकि यह दिव्य बुद्धि ही **यज्ञवाहसं** यज्ञ

के आध्यात्मिक आधिभौतिक आधिदैविक तीनों प्रकार के लाभों को एक साथ प्राप्त करा सकती है। **सुमृडीकाम्** यह कल्याण-कारिणी सुख को प्रदान करने वाली है, **वर्चोधां** हमारे अन्दर पराक्रम को धारण कराने वाली **सुतीर्था** हमें दुःख से पार लगाने वाली भी यही है। **नो असद्वशे** यदि यह हमारे अपने अधीन हो तो संसार का कोई भी अभीष्ट हमसे दूर नहीं हो सकता। इस प्रकार इस मन्त्रार्थ में दिव्य बुद्धि की चार विशेषतायें एक साथ गिना दी हैं– (1) यह बुद्धि तात्कालिक शान्ति-सन्तोषरूपी सुख ही नहीं स्थायी सुख को प्रदान करने वाली है (2) यह बुद्धि मनुष्य के अन्दर सत्य बोलने के वर्चस् तेज व पराक्रम को धारण कराने वाली है, (3) यह मेरे अन्दर सौम्य भाव माधुर्य विनम्रता जिसके फलस्वरूप यज्ञ के तीन रूप देवपूजा संगतिकरण और दान के भाव को पैदा करने वाली है, (4) यही तीर्थ ही नहीं सुतीर्थ है क्योंकि यदि बुद्धि अच्छी अर्थात् दिव्य नहीं होगी तो तीर्थ भी कुतीर्थ में बदल जायेंगे। लोग मन्दिरों जलाशयों गंगादि नदियों को पवित्र तीर्थ मानते हैं आज वे ही मन्दिर दिव्य सद्बुद्धि के अभाव में भ्रष्टाचार पाप के अड्डे बन गये हैं व पवित्र जलाशय भी सम्पूर्ण नगर की गन्दगी के ढेर, कूड़ा-करकट गिराने के केन्द्र बन गये हैं। दिव्य बुद्धि का तात्पर्य केवल अपने सुख अपने हित की बात न सोचना अपितु जहाँ हम रहते हैं उस सम्पूर्ण परिवार, परिसर, समाज, राष्ट्र के हित की बात सोचना है। इसीलिये नीति संग्रह में कहा है–

त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्।
ग्रामं जनपदस्यार्थे स्वात्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्॥

अर्थात् कुल परिवार के हित में यदि एक का त्याग करना पड़े तो कर दे, कुल से बढ़कर ग्राम के लिये यदि कुल का त्याग करना पड़े तो कर दे, इसी प्रकार जनपद के लिये ग्राम तथा आत्मिक उन्नति परमात्मा की प्राप्ति के लिये पृथिवी को छोड़ कर जंगल में जाना पड़े तो चला जाये। इस प्रकार बड़े हित के लिये छोटे हित का व्यक्तिगत स्वार्थ का त्याग करना ही दिव्य बुद्धि है सुतीर्थ है। **तरन्ति दुःखानि यैस्तत्तीर्थम्** जिससे हम दुःख से पार हों उसी का नाम तीर्थ है। इस दृष्टि से पुराणों में– सत्य, क्षमा, इन्द्रियनिग्रह, सर्वभूत-दया, आर्जव (सरलता), दान, तप, ब्रह्मचर्य, शम, सन्तोष, प्रियभाषण, धृति (धैर्य), ज्ञान आदि को तीर्थ कहा है किन्तु **तीर्थानामपि तत्तीर्थं विशुद्धिर्मनसः परा** (स्कन्द पुराण 6/31) इन तीर्थों से भी बढ़ कर परम तीर्थ मन की शुद्धि को बताया है जो कि सद्बुद्धि सद्विवेक से ही जन्म लेती है। और उस सद्बुद्धि को सदैव अपनी कामना (**वशे– वश कान्तौ**) बना कर अपने

वश में रखेंगे तभी हम सफल होंगे क्योंकि दिव्यता को देवत्व को बनाये रखना बहुत कठिन है। असुर बनना तो बहुत आसान है पर देवत्व से फिसलने में एक सेकेण्ड नहीं लगता है। देव वह है जो परार्थ की बात सोचता है मनुष्य वह है जो स्वार्थ की सोचता है और असुर वह है जो अपने निहित स्वार्थ के लिये दूसरों का विनाश तक करने से नहीं चूकता। इसी बात को भर्तृहरि ने बड़े सुन्दर शब्दों में कहा है–

एके सत्पुरुषाः परार्थ घटकाः स्वार्थं परित्यज्य ये।
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्थाविरोधेन ये।
तेऽमी मानुषराक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये।
ये निघ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे।।

इस श्लोक में मनुष्यों की सात्त्विक, राजसिक तथा तामसिक भेद से तीन कोटि बताने के बाद भर्त्तृहरि इस श्लोक के चतुर्थ चरण में आश्चर्य भरे शब्दों में लिखते हैं कि लेकिन जो निरर्थक बिना किसी प्रयोजन के यानी जिसमें उसका अपना कोई स्वार्थ भी नहीं सिद्ध हो रहा है फिर भी यदि कोई दूसरों के हित का हनन करने में लगा है तो वह कौन है उसे क्या संज्ञा दी जाये यह मेरी बुद्धि से परे है **ते के न जानीमहे**। अस्तु।

चाहे कोई भी प्रवृत्ति हो अच्छी या बुरी उसका असली कारण तो मन है। इस संसार में हमारे बन्धन और मोक्ष का कारण भी यही है– **मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः**। यदि हमारा मन दृढ़ हो सत्यसंकल्प से युक्त हो तो हम त्रैलोक्य के भी स्वामी बन सकते हैं। मन्त्र के अन्तिम भाग में यही कहा है– **ये देवाः** जो देव अथवा जो इन्द्रियाँ (**देवा इन्द्रियाण्युच्यन्ते**) **मनोजाताः** मन से उत्पन्न हुए हैं अर्थात् मन रूपी लगाम के अनुसार चलते हैं अथवा मन का अर्थ है ज्ञान अर्थात् बुद्धि (मन ज्ञाने) मनसा ज्ञानेन जाताः अर्थात् बुद्धि को सारथि मान कर उसकी आज्ञा में चलते हैं वे मानों उससे उत्पन्न हैं उसके द्वारा कार्यों में लगाए गए हैं इसलिये वे देव **मनोजाताः मनोयुजः** कहे गए हैं **बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च** (कठो. 3/3)। साथ ही जो **दक्षक्रतवः** अपने कर्म में कुशल अथवा दृढ़ संकल्प वाले होते हैं **ते नः अवन्तु** वे हमारी रक्षा करें उनके पालने में रहकर जैसे छोटा बच्चा पालने में लेटा हुआ सुरक्षित रहता है आनन्दित रहता है उसी प्रकार हम उन देवों के– प्रकृति के अथवा देवों के देव उस परम प्रभु के पालने में उसकी इच्छा में और उसकी आज्ञा में स्वयं को सुरक्षित व आनन्दित मानें।

अव धातु के महर्षि पाणिनि ने 19 अर्थ गिनाये हैं– अव रक्षण, गति, कान्ति,

(शेष पृष्ठ 27 पर)

सम्पादकीयम्

शास्त्रार्थ का रूप लेता एक वृत्तान्त–

पिछले दिनों 21-22 जनवरी 2012 द्विदिवसीय राज्यस्तरीय **महिला पुरोहित सम्मेलन** का आयोजन शौनकाश्रम पंचवटी नासिक (महाराष्ट्र) में **राष्ट्र सेविका समिति** की ओर से किया गया जिसमें मुझे अध्यक्षा के रूप में आमंत्रित किया गया था। वहाँ जाकर बहुत अच्छा लगा सम्पूर्ण आयोजन महिलाओं का था। सम्मेलन संयोजिका **सौ. विद्या दुग्गल**, पुरोहित वर्ग प्रमुख **सौ. वैशाली पाठक** तथा सबकी प्रेरणा भूत मार्गदर्शिका **पूर्णिमा ताई** सहित महाराष्ट्र के विभिन्न मुम्बई, पुणे, नागपुर आदि स्थानों से अपनी-अपनी शाखा प्रमुख बहिनों की जागृति, सक्रियता को देखकर बहुत आनन्द हुआ। यद्यपि कार्यक्रम में सभी महिलायें पुरुष मराठी में ही बोल रहे थे जिसमें मेरी बहुत रुचि नहीं थी पर महिलाओं का आत्मविश्वास और पूर्णिमा ताई का हर कार्यक्रम के अन्त में ऐक्शन सहित अधिकार पूर्वक समाधानात्मक वक्तव्य सभी को आनन्दित करने वाला होता था। बहिनों ने बताया प्रतिवर्ष हम लगभग सौ महिला पुरोहिताओं को तैयार करते हैं अबतक चार सौ महिला पुरोहिता तैयार हो चुकी हैं सुन कर बड़ा उत्साह हुआ किन्तु धीरे-धीरे जब मैंने उनसे अन्तरंग वार्त्ता आरम्भ की तो निराशा भी हुई। और लगा कि जब तक महिलायें विशुद्ध रूप से दयानन्द को नहीं अपनाएंगी वे अज्ञानान्धकार से ऊपर नहीं उठ पाएंगी। बात संस्कारों की हो, यज्ञ की हो, वेदाध्ययन की हो या अन्य सामाजिक व्यवहार की पुरुष समाज को अपना गुरु बनाकर महिलाओं का सम्पूर्ण उद्धार नहीं हो सकता। कहीं न कहीं से उनके अल्प ज्ञान व अशक्ति का लाभ उठाकर उनका शोषण होता ही रहेगा। अस्तु।

सर्वप्रथम मैंने उनसे पूछा आप महिला पुरोहिता बनकर सोलहों संस्कार कराती हैं बोलीं– नहीं, ऐसा अवसर नहीं आता है। मैंने कहा– आप यज्ञोपवीत संस्कार कराती हैं बोलीं– हाँ!, मैंने पूछा- आपका यज्ञोपवीत हुआ है, बोलीं- नहीं। उन्होंने पूछा- आप सन्ध्या करती हैं, मैंने कहा- हाँ। फिर मैंने पूछा- आप करती हैं, बोलीं हाँ। मैंने कहा- जरा सुनाइये, फिर सुनाने लगीं– **ओं केशवाय नमः वासुदेवाय नमः गोविन्दाय नमः माधवाय नमः** आदि-आदि। मैंने कहा– गोविन्द माधव वासुदेव आदि कौन हैं आपको पता है, बोलीं– हाँ, श्रीकृष्ण हैं। फिर मैंने कहा– क्या श्रीकृष्ण जी सन्ध्या करते थे? बोलीं– हाँ। मैंने कहा– सन्ध्या में आप गोविन्दाय, माधवाय वासुदेवाय बोल कर श्रीकृष्ण को नमन कर रही हैं तो स्वयं वासुदेव कृष्ण सन्ध्या करते समय किसको नमः बोलते होंगे, बोलीं– पता नहीं। मैंने उन्हें बताया यह वैदिक सन्ध्या नहीं है। वे बोलीं– पर हमारे गुरूजी ने तो हमें यही सिखाया है। फिर मैंने पूछा– आप इतनी संख्या में महिला पुरोहित बनाकर क्या करती हैं? बोलीं– हम

ग्रहशान्ति, मंगला गौरी, हरतालिका, वट सावित्री पूजा, गणेश पूजन आदि जो हमारे गुरू जी ने हमको सिखाया है हम वो कराती हैं। मैंने कहा– आपको पता है– शास्त्रों में विवाह को छोड़कर शेष सभी संस्कार कन्याओं के अमन्त्रक अर्थात् मन्त्र रहित विधान किये गये हैं। फिर मैंने पूछा- आपको 16 संस्कारों के नाम पता हैं? बोलीं– हाँ, मैंने कहा– बताइये। क्योंकि इनके गुरूजी की पुस्तकों में वानप्रस्थ संन्यास और अन्त्येष्टि संस्कार का तो कोई प्रावधान ही नहीं है और उपनयन के बाद इनके यहाँ केशान्त संस्कार का विधान है। केशान्त का अर्थ है केशों का अन्त कर देना जो कि स्त्रियों का तो कोई करेगा नहीं फिर स्त्रियों के पूरे 16 संस्कार कैसे होंगे? फिर मैंने गुरुजी से ही 16 संस्कारों के नाम पूछे, वे बोले– वेदारम्भ संस्कार के बाद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद के अध्ययन का अलग-अलग संस्कार होता है इनको मिलाकर 16 संस्कार होते हैं। मैंने कहा– आपके शास्त्रों में तो पर शाखा के अध्ययन में दोष बताया गया है इसलिये जो ऋग्वेदी है वह ऋग्वेद का ही अध्ययन करेगा यजुर्वेद सामवेदादि का नहीं इसी प्रकार जो यजुर्वेदी है वह यजुर्वेद का ही अध्ययन करेगा ऋग्वेद का नहीं फिर आपके मत में किसी पुरुष के भी 16 संस्कार कैसे होंगे? और स्त्रियों का तो अमन्त्रक ही संस्कार आपके शास्त्र में विहित है जिससे कि वे वेदमन्त्र का श्रवण न कर सकें फिर उनका तो उपनयन और वेदारम्भ संस्कार भी नहीं होगा फिर उनके 16 संस्कार कैसे होंगे? तो चुप।

मैंने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा आपके जो गुरूजी हैं पहले मैं उनसे ही कुछ प्रश्न करना चाहूँगी– प्रथम क्या ये महिलायें जो कार्य कर रही हैं आप उससे सन्तुष्ट हैं सहमत हैं? वे बोले- हाँ हमें प्रसन्नता है महिलायें आगे बढ़ रही हैं उनमें संस्कारों के प्रति जागरूकता उत्पन्न हो रही है यदि महिलायें संस्कारवती होंगी तो अपनी सन्तानों को भी सुसंस्कारी बनायेंगी पर हाँ! जब बात शास्त्र की आयेगी तो उसमें तो शास्त्र ही प्रमाण माना जायेगा इसलिये ये प्रश्न तो विद्वानों के मध्य करने योग्य है वे ही इसका निर्णय करेंगे हम तो इसमें अपना कोई निर्णय दे नहीं सकते। फिर जब उन पर दबाव डाला गया कि लेकिन आप क्या मानते हैं आप अपनी बात बताइये तो उनको कहना पड़ा कि शास्त्र की दृष्टि से तो हम इससे असहमत हैं। एक और गुरू जी थे वे भी लगभग यही बोले। अब महिलायें सतर्क होकर रुचिपूर्वक इस वार्त्तालाप को सुनने लगीं क्योंकि ये तो उनके अधिकारों पर प्रहार था। जिन गुरू जी को आज तक वे अपना परमहितैषी समझती थीं वे ही उनके पूर्ण पक्षधर नहीं थे। फिर थोड़ा रुक कर उनके गुरू जी बोले– आज प्रातः जब मैं अपने गुरू जी से मिलने गया तो यही चर्चा हमारे बीच हुई उन्होंने कहा– अरे! जब प्रकृति ने ही यह भेद कर दिया तो हमसे क्या पूछना हम भला क्या करेंगे। इसलिये यदि लड़ना है तो प्रकृति से लड़ो फिर भी यदि कोई परिवर्त्तन ही करना है तो यह कार्य तो कोई युगपुरुष ही कर सकता है हम आप तो नहीं।

मैंने कहा– ठीक है! बहुत अच्छी बात है सर्वप्रथम मैं आपको बताना चाहूँगी कि इस कलियुग के वे युगपुरुष हैं– **महर्षि दयानन्द सरस्वती**। जिन्होंने हर ढोंग-पाखण्ड, अज्ञान, अन्धविश्वास के प्रति लोगों को सतर्क किया है, उन्होंने स्त्री शिक्षा और संस्कारों पर भी सप्रमाण अपना युगान्तरकारी निर्णय दिया है। और सबसे बड़ी बात उनका स्पष्ट कथन है मैं जो भी कह या लिख रहा हूँ वह ईश्वर की आज्ञा रूप वेद को प्रमाण मान कर कह लिख रहा हूँ इसलिये मेरी बात यदि वेद के विरुद्ध हो तभी अमान्य है अन्यथा नहीं। क्योंकि वेद ही इस धरती पर स्वतः प्रमाण ग्रन्थ हैं इसके अतिरिक्त संसार के अन्य सभी ग्रन्थ परतः प्रमाण हैं यही सिद्धान्त आज तक ब्रह्मा से लेकर जैमिनि पर्यन्त ऋषि महर्षि मानते आये हैं। मीमांसा दर्शन के स्मृति प्रामाण्याधिकरण में–

विरोधे त्वनपेक्ष्यं स्यादसति ह्यनुमानम्।

(मी. 1/3/3)

अर्थात् श्रुति और स्मृति के विरोध होने पर श्रुति ही मान्य है स्मृति नहीं वहाँ स्मृति सर्वथा उपेक्षणीय है किन्तु जो बात श्रुति से अविरुद्ध स्मृति में विहित हो वह वैदिक है यह मान लेना चाहिये कहा है। इसलिये यह ध्यान रखना होगा कि जब शास्त्र की बात आयेगी तो वही शास्त्र प्रामाणिक होगा जो वेद के अनुकूल होगा जबकि वेदों में तो स्पष्ट रूप से नारी के विदुषी होने की चर्चा आई है वेद के एक मन्त्र में उससे प्रार्थना की गई है कि–

इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योतेऽदिते सरस्वति महि विश्रुति।
एता ते अघ्न्ये नामानि देवभ्यो मा सुकृतं ब्रूतात्॥

(यजु. 8/43)

अर्थात् ऐ नारी! तू इडा है, रन्ता है, हव्या है, काम्या है, चन्द्रा, ज्योति, अदिति, सरस्वती, मही, विश्रुति है, तू अघ्न्या है तेरे इतने सारे नाम हैं क्योंकि तू इतने गुणों विद्याओं से सुभूषित है तू हम पुरुषों को देव बनाने के लिये हमें सुकृत का उपदेश कर। तू अदिति है अदिति का अर्थ महर्षि यास्क ने– **अदितिरदीना देवमाता** (निरु. 4/4) जो अदीन है अर्थात् धर्म कर्म में अखण्डित है तथा देवों का निर्माण करने वाली है उस का नाम अदिति है। सरस्वती तो कहते ही विदुषी स्त्री को हैं और विद्वान् या विदुषी कौन होता है? जो शास्त्रज्ञ हो वेद का ज्ञाता हो। इसीलिये कोई पुरुष भी यदि विद्वान् हो अच्छा प्रवक्ता हो तो उसके लिये इनके ऊपर सरस्वती देवी की कृपा है अथवा इनके कण्ठ में सरस्वती विराजमान है यह कहा जाता है पर यदि स्त्री को ही वेद पढ़ने का अधिकार नहीं है तो उसे विदुषी या सरस्वती कैसे कहा जा सकता है?

और जहाँ तक प्रकृति से लड़ने की बात आपने कही है तो मैं कहना चाहूँगी कि इसमें प्रकृति से लड़ने जैसी कोई बात नहीं है। प्रकृति ने तो स्त्री पुरुष का भेद केवल सृष्टि परम्परा को बनाये रखने के लिये किया है। ज्ञान को ग्रहण करने के लिये तो ज्ञानेन्द्रियों की आवश्यकता है तथा मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार इस अन्तःकरण

चतुष्टय की आवश्यकता है जिसमें प्रकृति ने कोई भेद नहीं किया है। ऐसा नहीं है कि पुरुषों के दो आँख या दो कान हैं तो स्त्रियों के एक आँख और एक कान। हाँ! प्रजनन के हिसाब से अंगविशेष की आशय विशेष की रचना है जिसकी आवश्यकता केवल उसी के लिये है पर इससे विद्या ग्रहण या धर्म कर्म करने में स्त्री के लिये कोई बाधा प्रकृति ने उत्पन्न की हो ऐसी बात नहीं है। रह गई बात उन तीन-चार दिनों की! जिनके कारण स्त्रियों को अपवित्र माना जाता है मैं कहना चाहती हूँ वह अंगविशेष का कार्य है जैसे अंगविशेष से प्रतिदिन मल-मूत्र त्याग करने पर भी कोई अपवित्र नहीं माना जाता उसी प्रकार अंगविशेष से सम्बद्ध इन तीन दिनों की प्रक्रिया से भी किसी को अपवित्र मान कर उसे सदा के लिये वेदाध्ययन से वञ्चित नहीं किया जा सकता है। शरीर के अन्य अंगों की तरह यह भी शरीर के अंगविशेष का स्वाभाविक धर्म है इसमें प्रकृति से लड़ने जैसी कोई बात कत्तई नहीं है।

अब बात जब शास्त्र की और अमन्त्रक समन्त्रक की आयी तो एक बार पंडित जी फिर उठ खड़े हुए और कहने लगे– आखिर मन्त्रपूर्वक संस्कार कराने की इतनी प्रतिबद्धता क्यों? जबकि श्लोकों में भी तो वही बात कही गई है। फिर मैंने कहा– मैं पूछना चाहती हूँ अपने पण्डित जी से कि आखिर वह कौन सी ऐसी गुप्त शिक्षा या संस्कार है जिसका बोध मन्त्र बोलकर आप बालकों को तो कराना चाहते हैं पर बालिकाओं को नहीं। यदि स्त्रियाँ मन्त्र नहीं पढ़ेंगी तो क्या अन्नप्राशन संस्कार में जहाँ मन्त्र बोल कर बालक के लिये चावल धोने पकाने का विधान है वहाँ क्या बालक (पुरुष) के लिये स्त्री नहीं बल्कि पुरुष चावल पकाएंगे? और केवल बालिका के लिये ही स्त्री चावल पकायेगी? क्या यह भी विधान आपके शास्त्रों में है? इस पर वे नतमस्तक हो चुप होकर बैठ गये। फिर मैंने कहा संस्कारों का उद्देश्य मानव का सम्पूर्ण निर्माण उसका सर्वाङ्गीण विकास करना है उसे उसके जीवन के उद्देश्य धर्म अर्थ काम मोक्ष से जोड़ना है उसे अपने जीवन के अन्तिम उद्देश्य मोक्ष तक की सिद्धि का पथ सोपान बताना है और इसमें स्त्री पुरुष लिङ्ग का कोई भेद वेदों में नहीं है।

इस दृष्टि से महर्षि देव दयानन्द ने प्रत्येक स्त्री पुरुष के लिये पक्षपात रहित होकर सोलह संस्कारों का विधान किया है। उपनयन के बाद वेदारम्भ जिसमें चारों वेदों का अध्ययन कराया जाता है वह सब के लिये चाहे वह स्त्री हो या पुरुष समान रूप से विहित है अनन्तर विद्या की समाप्ति पर समावर्त्तन संस्कार न कि केशान्त और फिर विवाह संस्कार का विधान किया है। प्रायः सभी गृह्य सूत्रों में विवाह को अन्तिम संस्कार माना गया है जबकि आधुनिक भारत के निर्माता युगपुरुष महर्षि दयानन्द ने इसमें संशोधन करके विवाह के बाद वानप्रस्थ और संन्यास संस्कार तथा अन्त में अन्त्येष्टि संस्कार का विधान किया है। महर्षि ने जीवन की सम्पूर्णता को लक्ष्य करके इन दोनों संस्कारों को बढ़ाया है। गृहस्थ आश्रम में ही जीवन बिता देना यह मनुष्य जीवन की सम्पूर्णता नहीं है इस दृष्टि से वानप्रस्थ और संन्यास

इन दोनों संस्कारों का महर्षि ने विधान किया है। संसार भोगने के बाद धीरे-धीरे संसार से विरक्ति तथा अध्यात्म में प्रवृत्ति होनी ही चाहिये। तभी मनुष्य अभ्युदय और निःश्रेयस् धर्म के इन दोनों पक्षों की सिद्धि कर सकता है। **यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः** (वैशे. द. 1/1/2) कणाद ने धर्म का यही लक्षण बताया है। तभी **भोगापवर्गार्थं दृश्यम्** (यो.द. 2/18) इस दृश्यमान जगत् के भोग और अपवर्ग भोगना और त्यागना इन दोनों अर्थों की सिद्धि हो सकती है जिसके लिये परमेश्वर ने इस दृश्यमान जगत् की रचना की है। जीवन की इहलीला समाप्त होने पर **भस्मान्तं शरीरम्** (यजु. 40/15) वेद की इस आज्ञानुसार मन्त्रोच्चार पूर्वक अन्त्येष्टि संस्कार का भी विधान उन्होंने अपनी संस्कार विधि में किया है जिससे मृत्यु के क्षणों में भी आत्मा संस्कारित परिशोधित होकर जाये। भस्म के बाद कोई और औत्तरदेहिक श्राद्ध पिण्डदानादि क्रिया शेष नहीं है इससे यह भी उन्होंने स्पष्ट कर दिया जबकि गृह्य सूत्रों में इनका लम्बा-चौड़ा विधान है।

इस सम्पूर्ण वाद प्रतिवाद से महिलायें बहुत प्रसन्न हुईं और कहने लगीं– बहुत अच्छा लगा। विशेष रूप से जो आपने गुरूजी लोगों से प्रश्न किया वह बहुत अच्छा हुआ सारी बातें साफ हो गईं। क्या हम लोग आपके पास आकर मन्त्रोच्चारण और संस्कार आदि सीख सकती हैं? मैंने कहा– हाँ। इससे पूर्व एक सत्र में पञ्चमहायज्ञादि नित्य कर्त्तव्य व सम्पूर्ण आचार-विचार के विषय में भी मैंने बताया था, वे बोलीं– असली शिक्षा और संस्कार तो यही है जो हमें प्रतिदिन करना है। किसी दिन विशेष में एक सवा घण्टे की पूजा व संस्कार कराने मात्र से तो किसी के जीवन का निर्माण हो नहीं सकता आपने बहुत अच्छा बताया, हमें बहुत अच्छा लगा आदि आदि।

कार्यक्रम के अन्त में गुरूजी जिनसे अभी तक मैं प्रश्न कर रही थी, मुझे ज्ञात हुआ उनकी पत्नी व बच्चे भी संस्कृत में ही सम्भाषण करते हैं बहुत अच्छा लगा। वे सपत्नीक बड़े प्रेम व सम्मान पूर्वक मिले और बड़ी विनम्रता पूर्वक मेरा सामान स्वयं उठाकर साथ चलने लगे और रात्रि अपने घर पर ही विश्राम, आतिथ्य ग्रहण करने का भी आग्रह करते रहे।

इसी क्रम में प्रथम दिन जब मैंने स्त्रियों के अमन्त्रक-समन्त्रक संस्कार पर प्रश्न किया था तो अगले दिन कोई पण्डित जी बीस तीस पन्नों का एक पुलिन्दा मुझे देने के लिये पकड़ा गये थे कि मैं स्त्रियों के वेदाध्ययन के विषय में यह मानता हूँ पर अन्तिम क्षणों में जब मेरा भाषण हो रहा था वे वहाँ उपस्थित नहीं थे मैं उनसे पूछना चाहती थी कि यह पुलिन्दा जो कि स्त्रियों के वेदाध्ययन का समर्थक है यह आपका इण्टरनेट से निकाला हुआ संग्रह है या आपका स्वयं का विचार है पर वे नहीं थे जिस पर उपस्थित गुरू जी ने ही उत्तर दिया कि यह उनका संग्रह मात्र है विचार नहीं। अस्तु।

इस प्रकार 16 संस्कारों का विधान मनुष्य मात्र को पूर्णता प्रदान करने के लिये है इसमें किसी प्रकार का पक्षपात न परमेश्वर को अभिप्रेत है न उसकी वेदाज्ञा का पालन करने वाले महर्षि को है। **इतिहास साक्षी है महाभारत काल से पूर्व तक इस देश की नारियाँ ब्रह्मवादिनी ऋषिका वेदप्रवक्त्री विदुषी चारों वेदों की ज्ञाता ब्रह्मा अरण्यानी (वानप्रस्थी) प्रव्राजिका (संन्यासिनी) तक रही हैं।** आज पुरुषों से अधिक स्त्रियों को सुशिक्षित सुसंस्कृत शास्त्रज्ञ वेद विदुषी बनने की आवश्यकता है जिससे बच्चों में अच्छे संस्कार बनें अपना देश फिर से अपने पुरातन गौरव वैभव को प्राप्त करे। यह तभी सम्भव है जब नारियाँ महर्षि के स्वप्नों को वैदिक आदर्शों को समझेंगी और उसे साकार करने का प्रयास करेंगी।

पाणिनि कन्या महाविद्यालय की स्थापना के पीछे उसकी संस्थापिका वेदविदुषीमणि महिलारत्न **आचार्या डा. प्रज्ञा देवी, आचार्या मेधा देवी जी** का यही उद्देश्य था। इसी उद्देश्य से इसी 5 मार्च को उनकी 75वीं जयन्ती पर अपने पाणिनि कन्या महाविद्यालय में अध्ययनरत देश विदेश की 30 कन्याओं का उपनयन व वेदारम्भ संस्कार सम्पन्न कर हमने कन्याओं में उसी उद्देश्य व परम्परा को प्रतिफलित करने का प्रयास किया है। आप सबको जानकर प्रसन्नता होगी कि प्रिय **प्रीति विमर्शिनी जी** जो पूर्ववत् मिलकर विद्यालय के सम्पूर्ण अध्यापन कार्य में बड़े परिश्रम से संलग्न हैं इसी 15 मार्च को सात कन्याओं को सम्पूर्ण **अष्टाध्यायी महाभाष्य** पढ़ाकर तैयार किया है उन्हें प्रभु इसी प्रकार शक्ति, बुद्धि, स्मृति दें जिससे यह परम्परा कभी विलुप्त न होने पाये। आप सबका भी दायित्व है कि इस प्रकार की संस्थायें जो कन्याओं को वैदिक आर्ष परम्परागत शिक्षा देने का कार्य कर रही हैं वे फलती-फूलती रहें इसका प्रयास करें। मैं तो जहाँ भी जाती हूँ मुझे लगता है लोग व्यक्तिगत रूप से यथासम्भव ऐसे कार्यों को ऋषि के मिशन को आगे बढ़ाने में सतत प्रयत्नशील हैं देखकर मेरा हृदय आह्लादित हो जाता है। कृपया प्रसन्नता बाँटें और प्रसन्न रहें।

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से नववर्ष का आरम्भ होता है। 23 मार्च से नवरात्र के शुभागमन के साथ नये वर्ष का शुभारम्भ हो चुका है। यह नववर्ष न केवल भारतीयों का अपितु सम्पूर्ण सृष्टि के आरम्भ का नववर्ष है। क्योंकि ज्योतिष के हिमाद्रि ग्रन्थ में स्पष्ट उल्लेख है कि–

चैत्रे मासि जगद् ब्रह्मा ससर्ज प्रथमेऽहनि।
शुक्लपक्षे समग्रन्तु तदा सूर्योदये सति।

अर्थात् सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा नामधेय परमेश्वर ने चैत्र मास के शुक्ल पक्ष के प्रथम दिन सूर्योदय होने पर सम्पूर्ण सृष्टि की रचना की। अस्तु। इस विश्वावसु नामक नववर्ष के उपलक्ष्य में मैं पाणिनि परिवार की ओर से अपने **सभी सहृदय पाठकों, दानदाताओं व शुभचिन्तकों का हार्दिक अभिनन्दन करती हूँ और कामना करती हूँ कि यह नववर्ष आपके लिये आपके परिवार व समाज के लिये अहर्निश मंगलमय हो।**

● **– आचार्या नन्दिता शास्त्री**

लघुकथा

निरीक्षणम्

– डा. प्रतिभा पुरन्धि
(असिस्टैण्ड प्रोफेसर)

[इस लघुकथा की लेखिका **डा. प्रतिभा पुरन्धि** अपने महाविद्यालय की वरिष्ठ स्नातिका हैं। उनकी यह संस्कृत लघुकथा उत्तराखण्ड संस्कृत अकादमी हरिद्वार द्वारा भारतीय संस्कृत कथा लेखन प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार से सम्मानित की गई है। पूर्व संसाधन विकास मन्त्री मा. **डा. मुरली मनोहर जोशी जी** ने डा. प्रतिभा जी को यह पुरस्कार प्रदान किया। हम सभी अपनी प्रिय बहिन के इस सम्मान से गौरवान्वित व आनन्दित हैं। **– सम्पा०**]

निजकक्षायाः अन्तिमायाम् आसन्दिकायाम् आसीना अलका अद्य नितराम् औदासीन्यम् आवहन्ती विचिन्तयति– 'ममापि जनकः चेत् अद्य अभविष्यत् तदा अहमपि अद्य नूतनगणवेषेण विद्यालयम् आगमिष्यम्।' अद्य तस्याः विद्यालये निरीक्षकमहोदयस्य उपस्थितिः सुनिश्चिता अतः 'सर्वाः छात्राः अद्य सुभूषितं नूतनं गणवेषं धारयित्वा आगमिष्यन्ति' इति प्रधानाचार्यमहोदयेन पञ्चभ्यः दिवसेभ्यः प्राक् सर्वाः सूचिताः आसन्। परम् अकिञ्चित्करी वराकी अलका कुतः नूतनानि वस्त्राणि लभेत? पिता अस्या; तदैव पञ्चत्वं प्राप्तः यदा असौ वर्षद्वयस्य आसीत् ततः इयं किमपि सुखं न लब्धवती। तस्याः पिता हि भारतीयसेनायां सैनिकश्च सन् भारतपाकयुद्धे प्राणैः वियोजितः। तस्याः माता यथा कथा चान्येषां गेहेषु कार्यं कुर्वन्ती आत्मनः अलकायाश्च दग्धम् उदरं बिभर्ति स्म। साऽपि इदानीं दैवदुर्विपाकात् पर्यङ्कम् अधिशयाना तिष्ठति। पञ्चदशभ्यः दिवसेभ्यः प्राक् यदा सा कार्यं समाप्य गृहं प्रत्यावर्त्तत तदा पथि कस्यचित् द्विचक्रकवाहनस्य प्रहारेण तस्याः दक्षिणपादस्य अस्थिभङ्गः जातः। चिकित्सकनिर्देशानुसारं सा इदानीं पर्यङ्कम् उपास्ते। अलकायाः एकः प्रियदर्शनः अनुजः अपि आसीत् सोऽपि एकदा भीषणेन ज्वरेण आक्रान्तः अलकां विहाय प्रभुं प्राप्तवान्।

अद्य एकलायाः अलकायाः सुकोमलयोः स्कन्धयोः गेहस्य महत्तरम् उत्तरदायित्वम् आपतितम्। महत्यः आपत्त्यः तस्याः समक्षम् अद्य। विधात्रा अलकायै प्रतिभा-परिश्रम-धैर्यादिकम् अनेके गुणाः प्रदत्ताः यैः सा स्वजीवनमार्गस्य सर्वाणि कण्टकानि समुच्छिद्य अग्रे वर्धते। विद्यालयात् आगत्य सा निजगेहे एव लघ्व्यः बालिकाः पाठयति तेनैव सा स्वकीयं मातुश्च भोजनवस्त्रादिकस्य व्यवस्थां कर्तुं पारयति। सर्वाणि कार्याणि साधयित्वा नक्तं यदा सर्वे जनाः स्वप्ने लीनाः निद्रासुखं लभन्ते तदा इयं वराकी पठनाय कालं लभते।

पञ्चदशवर्षीया अलका अद्य दशम्यां कक्षायाम् अधीयाना अस्ति। पठने इयं नितरां प्रवीणा। प्रत्येकस्यां कक्षायां प्रथमं स्थानं लभते। पठनेतर कार्यक्रमेषु अपि सा पटुतरा अतः अन्यासां छात्राणां सा ईर्ष्यापात्रम्। अन्याः समृद्धपरिवारस्य मन्दबुद्धयः छात्राः विभिन्न स्वादु खाद्यादिकं वस्तुजातमानीय तस्याः समक्षं दर्शयन्त्यः तां परिहसन्ति। अनेकेषु अवसरेषु एतस्याः अपमानं कुर्वन्ति परं धैर्यवती अलका मौनमादधाना सर्वमेव सहमाना केवलं पठने एव निजमनः व्यापारयति।

अद्य अलका किञ्चित्कालपूर्वघटित घटनाम् एकां

स्मरन्ती विषीदति। विद्यालयतः शैक्षणिकपरिभ्रमणार्थं तस्याः कक्षायाः सर्वाः छात्राः शिमलानगरं गच्छन्ति स्म। तस्याः शैक्षणिकयात्रायाः शुल्कं द्विशतमासीत्। एकत्र माता अस्वस्था अपरत्र अर्थाभावः अतः बहुशः इच्छन्त्यपि असौ तत्र गन्तुं न अपारयत्। तस्मिन् दिवसे सा गेहस्य एकान्ते स्थित्वा स्वदौर्भाग्यं निन्दन्ती भृशम् अरोदीत्।

अद्य विद्यालये सर्वाः छात्राः नूतनगणवेषं धारयित्वा समागताः। सर्वाः प्रमुदिताश्च दृश्यन्ते। अलका पुरातनमेव गणवेषं सम्यक् प्रक्षाल्य तदेव संधार्य आगतवती। अन्याः सर्वाः सहाध्यायिन्यः ताम् एवम्भूतां दृष्ट्वा परिहसन्ति। दुःखाधिक्येन सा नेत्रे उन्मील्य अधोमुखी स्थिता। कदा तस्याः अध्यापिका कक्षायां प्रविश्य पाठं पाठयितुम् आरब्धवती इति न सा ज्ञातवती। सहसा निरीक्षकमहोदयः कक्षायां प्रविष्टवान्। यदा सर्वाः छात्राः प्रणन्तुम् उत्थिताः तदेयम् अलका संज्ञां प्राप्तवती। निरीक्षकमहोदयेन अनेकशः प्रश्नाः पृष्टाः। सर्वाः छात्राः अधोमुखीभूय तूष्णीं स्थिताः, अध्यापिकया द्वितिस्त्रः योग्याः छात्राः संकेतिताः परं ताभिरपि निरीक्षकः न सन्तोषमवाप्नोत्। निरीक्षकमहोदयः कदाचित् अध्यापिकां पश्यति कदाचिच्च छात्राः। खिन्नमनसा यावदेव सः किमपि वक्तुं कामयते तावदेव तस्य दृष्टिः पृष्ठभागे एकस्मिन् उत्थिते हस्ते निष्पतति। असौ हस्तः अलकायाः आसीत्। आशान्वितेन निरीक्षकेण सरलाः कठिनाः अनेके प्रश्नाः पृष्टाः। अलका सर्वेषाम् एव प्रश्नानाम् उत्तराणि सम्यक् प्रदाय निरीक्षकमहोदयं पूर्णतः तोषितवती। हर्षभरेण निरीक्षकेण सर्वाभ्यः छात्राभ्यः योग्यतमा अलका भूरिशः प्रशंसिता पृष्टा च– पुत्रि! किं ते नाम? कस्ते पिता? किञ्चासौ करोति? प्रश्नानि एतानि श्रुत्वैव सा दीनानना अलका भावविह्वलतया रोदितुमेव आरब्धा। यदा तस्याः रोदनम् अवरुद्धं तदा सा स्वीयां सर्वाम् आत्मकथाम् उक्तवती। विस्मिताभ्याम् विस्फारिताभ्यां च नेत्राभ्यां निरीक्षकः तस्याः सर्वां दुखमयीं गाथां श्रुतवान्। किञ्चित् कालं विचार्य कमपि निश्चयं कुर्वन् सः अकथयत्– ''त्वादृशी छात्रा अन्यासां छात्राणां कृते आदर्शभूता। वयं त्वां प्रतिभाशालि-छात्राम् सम्प्राप्य गौरवान्विताः। अद्यप्रभृति यावत्ते सम्पूर्णम् अध्ययनं न परिसमाप्यते तावत् अध्ययनस्य सर्वः व्ययः मया स्वपुटकादेव प्रदास्यते। इत्येव त्वत्कृते पुरस्कारः।'' इत्युक्त्वा सः गतवान्।

अधुना तस्याः अध्यापिका तस्यै भूयोभूयः आशीर्वचनानि ब्रवीति। सर्वाः सहपाठिन्यः अपि तस्यै साधुवादं प्रयच्छन्ति। प्राक्तन- निजकुव्यवहारैः लज्जिताः क्षमां याचन्ते। सर्वत्रैव तस्याः गुणगानं भवति। सर्वम् एतत् विज्ञाय प्रधानाचार्योऽपि निजकार्यालये अलकामाहूय आशीर्वादं वितरति। क्षणानि इमानि स्मारं स्मारं अलका अद्य भृशं प्रसीदति, पूर्वानुभूतं सर्वं दुखभारं विस्मरति। वेगेन गेहमागत्य सा सर्वं वृत्तान्तं मातरं निवेदयति। मातापि ताम् अङ्कमारोप्य प्रगाढमालिङ्गितवती तस्याः मुग्धानने च अनेकशः चुम्बनानि दत्तवती। मातुः प्रहर्षस्याश्रुबिन्दवः अङ्कस्थायाः अलकायाः गात्रं निर्भरम् आर्द्रं कृतवन्तः। अलकायाः माता हीदानीं क्षणं निजभग्नपादस्य सर्वां वेदनां विस्मरति। स्वसुतायाः आननं हस्तेन स्पृशन्ती सा ब्रूते– ''त्वमेव मम द्वितीयः पादः त्वमेव मम द्वितीयः हस्तः। अद्य नाहं विकलाङ्गी। त्वमेव मम सर्वाङ्गी त्वमेव मम सर्वाङ्गी। अलकायाः नेत्रेभ्यः निःसृतानि अश्रुजलानि अद्य गङ्गाजलानि इव मातुः गात्रं पावयन्ति। ●

संस्कृतविभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

ब्राह्मण! सावधान

– डा. सम्पूर्णानन्द

एक कथा है कि विद्या ब्राह्मण के पास आकर बोली कि मैं तुम्हारी निधि हूँ, मेरी रक्षा करो, जो असूयावान्, असंयमी या दुःशील हो उसके हाथ में मुझे न जाने दो, तभी मैं वीर्यवती रह सकूँगी।

विद्या ह वै ब्राह्मणमाजगाम,
गोपाय मा शेवधिष्टेऽहमस्मि।
असूयकायानृजवेऽयताय मा मा,
ब्रूया वीर्यवती तथा स्याम्॥

इस सुन्दर वैदिक आख्यायिका का भाव स्पष्ट है और किसी समझदार को इस पर आपत्ति न होनी चाहिए। कुपात्र के हाथ में जाने से विद्या नष्ट हो जाती है। प्रत्येक विद्या के लिए एक ही प्रकार का पात्र नहीं होता। कुम्हारी (मिट्टी के बर्तन बनाना) के लिए एक प्रकार का अधिकारी चाहिये और ज्योतिष के लिए दूसरे प्रकार का, परन्तु पात्रता की जांच किये बिना शिक्षा देने से न तो योग्य कुम्हार मिल सकेंगे, न योग्य ज्योतिषी। जो लोग यह आक्षेप करते हैं कि भारत के विद्वान् अपनी विद्या को बहुत गुप्त रखते हैं वे स्यात् इस बात को भूल जाते हैं कि विद्वान् का यह कर्त्तव्य है कि विद्या को इतस्ततः न फेंकता फिरे।

गोप्यता की घातक प्रवृत्ति

परन्तु यह भी मानना पड़ेगा कि यह आक्षेप नितान्त निराधार भी नहीं है। गोप्य रखते-रखते विद्याओं का लोप हो जाता है। विदेशी शासन, विशेषतः विधर्मी शासन का प्रभाव हो या कुछ और कारण हो, परन्तु गोप्यता की प्रवृत्ति चरम सीमा तक पहुँच गयी है। मंत्र-तंत्र, योग जैसी विद्याओं को जाने दीजिये, ऐसे बहुत से लोग हैं जिनको किसी रोग की किसी अचूक औषध का कहीं से ज्ञान प्राप्त हो गया है, वह स्वयं वह औषध बनाकर दूसरों को देंगे, परन्तु बनाने की विधि किसी को नहीं बतलायेंगे। वह विद्या उनके साथ उठ जायेगी। मेरी बुआ आँख की एक औषध जानती थीं। मैंने देशी-विदेशी कोई औषध इस जोड़ की आज तक नहीं देखी। वह यह भी जानती थीं कि मैं ऐसा लालची व्यक्ति नहीं हूँ कि उससे रुपया कमाता या कोई दूसरा दुरुपयोग करता परन्तु लाख कहने पर भी वे टालती गयीं, उनकी मृत्यु हो गयी पर किसी को न बता गयीं। ऐसे सैकड़ों उदाहरण मिलेंगे।

किसी एक व्यक्ति का दोष नहीं है, ऐसा वातावरण छा गया है। यह बात तो लोगों के मन में जम गयी है कि कुपात्र को विद्या न देनी चाहिये, परन्तु यह नहीं माना जाता कि सुपात्र को न सिखाना घोर पाप है। विद्या की रक्षा का यह अर्थ

नहीं है कि उसका लोप ही हो जाये।

इसका दुःखद उदाहरण हमको वेदों के विषय में मिलता है। वेदों की रक्षा हमारे ब्राह्मणों ने जिस प्रकार की है उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा प्रत्येक हिन्दू ही नहीं प्रत्युत विश्वसंस्कृति का प्रत्येक प्रेमी करेगा। वेदों का जो कुछ अंश बच रहा है उसके लिए हम ब्राह्मणों के ऋण भार से कभी भी मुक्त नहीं हो सकते। परन्तु प्रशंसा करने के साथ-साथ कुछ कटु सत्य भी कहना पड़ता है। वेद बच तो गया, परन्तु पुस्तकालयों के बैठनों (वेष्टन) में। जो वेद इस देश के बहुसंख्यक निवासियों का सर्वस्व था, जो उनके धर्म का आधार था, वह आज उनके बीच से उठ गया। थोड़े से लोगों ने वेद का नाम सुना है, करोड़ों ने नाम तक नहीं सुना, जिन्होंने नाम सुना है, उनमें से कुछ ने विवाहादि के समय कुछ टूटे-फूटे मंत्र सुन लिये हैं। वेद की पोथी कैसी होती है, उसका किसको पता है? वेद में क्या है, इसे कौन जानता है? ईश्वरवादी, अनीश्वरवादी, द्वैतवादी, अद्वैतवादी, शैव, शाक्त, वैष्णव, आर्यसमाजी सभी के लिए वेद मान्य हैं, परन्तु किसी संस्कृत पाठशाला या हिन्दू स्कूल में जाइये, वहाँ मङ्गलाचरण में रामचन्द्र की स्तुति पढ़ी जायेगी, कहीं कृष्ण की, कहीं महादेव की, कहीं गणेश की, कहीं हनुमान की। जो सब सम्प्रदायों को मिलाने वाला, सबका स्रोत, श्रोता-वक्ता उभयपक्ष-सम्मत है उसका कहीं पता नहीं है। आग्रह करने पर यदि कोई संस्कृत पण्डित दो चार मंत्र पढ़ने को प्रस्तुत भी हुआ तो वर्ण, स्वर, मात्रा का ऐसा व्यभिचार कर देगा कि मन्त्र बेचारों की हत्या हो जायेगी। ऐसे अवसरों पर वृत्रवध की याद आ जाती है। **दुष्टः शब्दः स्वरतो वर्णतो वा मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह। स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात्** (महाभाष्य 1/1/1) ऐसे मंत्र पढ़ने और सुनने वाले का विनाश करते हैं, इनका न पढ़ा जाना ही अच्छा है।

साधन साध्य हो गया

यदि हमको यह विश्वास होता कि इस प्रकार सर्वसाधारण के सामने वेद को न लाकर अकेले में ब्राह्मण वर्ग उसका स्वाध्याय करता है और इस प्रकार उसकी रक्षा में तत्पर है तब भी सन्तोष होता। परन्तु हम जानते हैं कि ऐसा नहीं हो रहा है। सबके सामने मत पढ़ो– सबके सामने मत पढ़ो, कहते-कहते केवल 'मत पढ़ो', 'मत पढ़ो' रह गया। वेदार्थ एक ऐसी निधि थी जिसके पास तक पहुँचने के लिए छः बड़ी कुञ्जियाँ और दो छोटी कुञ्जियाँ लगती थीं। शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष बड़ी और इतिहास और पुराण छोटी कुञ्जियाँ हैं। जो पण्डित हैं वह प्रायः छोटी कुञ्जियों को हाथ नहीं लगाते और बड़ी में से प्रायः तीन, अर्थात् शिक्षा, कल्प और निरुक्त की ओर आँख उठाकर नहीं देखते। शेष तीन में व्याकरण, मुख्यतम है। इसकी पढ़ाई बड़ी धूमधाम से होती है, ज्योतिष और छन्द की ओर भी कम ध्यान नहीं दिया जाता। परन्तु इन शास्त्रों का वेदों

से विसंयोग हो गया है। इनको वेद की कुञ्जी न मानकर, तालाकुञ्जी की युगल मूर्ति माना जाता है। जो साधन था वह साध्य हो गया है। व्याकरण का ज्ञान वेद समझने के लिए नहीं, केवल व्याकरण की पण्डिताई के लिए प्राप्त किया जाता है। हमारी पेटी में हीरा है, इसको सबके सामने न खोलना चाहिये, इस विचार से पेटी ऐसी बन्द कर दी गयी कि हीरे की परख ही जाती रही। सैकड़ों बरसों से पेटी खुली ही नहीं, वेदार्थ समझने-समझाने की परम्परा प्रायः लुप्त हो गयी। संहिताओं की शाखा की शाखा लुप्त हो गयी पर किसी को पता न चला।

पाठ और अर्थ में अन्तर

मैं जानता हूँ कि अब भी कर्मकाण्ड के लिए थोड़ा सा वेद पाठ होता है पर इसका नाम स्वाध्याय नहीं है। इससे वेदार्थ नहीं, केवल थोड़े से मन्त्रों के शब्दों की रक्षा हो जाती है। इससे अच्छा स्वाध्याय तो पौराणिक कर्मकाण्ड की पोथियों और अनन्त चतुर्दशी व्रत-कथा जैसी पौराणिक कर्मकाण्ड की पोथियों का होता है क्योंकि अमर कोष लघुकौमुदी पढ़ा हुआ छात्र भी इनका बहुत कुछ अर्थ स्वयं लगा लेता है। वेदार्थ और वेदपाठ में कितना अन्तर है, इसके लिए केवल यही एक उदाहरण पर्याप्त होना चाहिये कि आज घर-घर नवग्रह की पूजा में शनि के लिए '**शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये, शंयोरभिस्त्रवन्तु नः**' मन्त्र पढ़ा जाता है। इसमें कहीं शनि का पता नहीं है। शन्नो का अर्थ है हमारा कल्याण परन्तु शनि से कुछ-कुछ स्वर मिलता है, इसलिये इसे शनि का मन्त्र मान लिया गया है। लगभग इतनी ही गड़बड़ गणेश जी के सम्बन्ध में है। उनकी गणना वैदिक देवों में नहीं है, परन्तु वह सर्वत्र पुजते हैं और उनके लिए '**गणानान्त्वा गणपतिं हवामहे** मन्त्र पढ़ा जाता है। इस मन्त्र में गणपति शब्द आया तो है पर वस्तुतः इसका प्रयोग गणेश जी के लिये नहीं हुआ है। यह मन्त्र यजुर्वेद के अश्वमेधाध्याय से लिया गया है। यदि सचमुच वेदों का अध्ययन होता तो शब्द साम्य के बल पर यह मंत्र गणेशजी के माथे न मढ़ा जाता। अर्थज्ञान विहीन पाठ के सम्बन्ध में निरुक्त में यास्क ने यह अवतरण दिया है–

स्थाणुरयं भारहारः किलाभूदधीत्य,
वेदं न विजानाति योऽर्थम्।
योऽर्थज्ञ इत्सकलं भद्रमश्नुते,
नाकमेति ज्ञानविधूतपाप्मा।
यद् गृहीतमविज्ञातं निगदेनैव शब्द्यते।
अनग्नाविव शुष्कैधो, न तज्ज्वलति कर्हिचित्।

वह मूर्ख केवल बोझ ढोने वाला है जो वेद को पढ़कर अर्थ नहीं जानता। जो अर्थज्ञ होता है वह सकल भद्र का वहाँ भोग करता है और ज्ञान से पाप को दूर करके स्वर्ग जाता है। जो पढ़ा हुआ बिना अर्थ समझे यों ही रटकर पाठ करता है, वह अग्निहीन स्थल में पड़े शुष्क काष्ठ के समान प्रज्ज्वलित नहीं हो सकता।

वैदिक स्वाध्याय उठ जाने का यहाँ तक परिणाम

पहुँच गया है कि आज का हिन्दू यह नहीं जानता कि वह किस की उपासना करता है। एक कोटि शब्द ने अनर्थ मचा रखा है। साधारणतः यही समझा जाने लगा है कि देवगण की संख्या तैंतीस करोड़ है। न कोई इनके नाम पूछता है, न पूछने पर कोई बता सकता है। जिस जगह से वह भूल पकड़ी जा सकती है वहाँ पहुँच होती ही नहीं। जो थोड़े से विद्वान् साहित्य के ज्ञाता हैं वह अधर्म को रोकना और अज्ञान को दूर करना अपना धर्म नहीं समझते। इन्द्र, मित्रावरुण, अश्विद्वय, वायु आदि वैदिक देवों को कौन पूछता है, अब तो स्वाहा पढ़कर भैरव, हनुमान और शीतला को आहुति दी जाती है, यही भुक्ति-मुक्ति भण्डार के स्वामी हैं।

वेदों की जगह नयी पुस्तकें

वेद तो गए पर उनकी जगह भी तो कुछ आना चाहिये। प्राकृत भाषाओं से काम नहीं चल सकता। यदि उनका प्रयोग होने लगे तो फिर ब्राह्मणों से लोग काम कम लें, स्वयं पौरोहित्य कर लें। फिर गम्भीरता में भी कमी आ जाये। अभी तक धारणा यही है कि पूजा पाठ की बात संस्कृत में होती है, इसलिए धर्मोपदेश का माध्यम वैदिक भाषा नहीं तो लौकिक संस्कृत तो होनी ही चाहिये। इसको पढ़ना और समझना सुकर होता है, छः महीने का परिश्रम पर्याप्त है। इस प्रकार वेदों की जगह नयी पुस्तकों का निर्माण होने लगा और थोड़ा बहुत अब तक होता जा रहा है। यदि यह नयी पुस्तकें वेदार्थ को समझने के लिए बनतीं या इनमें वह बातें विस्तार से कही गयी होतीं जो वेदों में संक्षेप से निर्दिष्ट हैं या इनमें किसी नयी और स्वतंत्र दार्शनिक विचारधारा का अवलम्बन किया गया होता तो हम इनका स्वागत करते। स्मृतियों में यही बात तो की गई है। पर यह नयी पुस्तकें तो वेद की गद्दी पर बैठ गयीं। विष्णु सहस्त्रनाम का पारायण किया जाता है, किसी वेद की संहिता का नहीं, नृसिंह या भैरव या हनुमान् का 'इष्ट' बहुत लोगों को होता है, गायत्री का 'इष्ट' कोई सिद्ध नहीं करता शिवमहिम्नस्तोत्र का पाठ सिर हिला हिलाकर किया और कराया जाता है, सामवेद सुनने में उससे अच्छा लगता है यह किसी को याद नहीं है।

वेदों से दूर जा पड़ने से धर्माधर्म की कसौटी ही बदल गयी या यों कहिये कि अब कोई कसौटी रह गयी ही नहीं। निरुक्त में आया है–

पुरस्तान्मनुष्या वा ऋषिषूत्क्रामत्सु देवानब्रुवन् को न ऋषिर्भविष्यतीति1 तेभ्य एतं तर्कमृषिम्प्रायच्छन्।

जब ऋषिगण पृथ्वी से उठ गये तो मनुष्यों ने देवों से पूछा कि अब हमारा ऋषि कौन होगा। देवों ने उनके लिए तर्क को ऋषि बनाकर भेजा। तात्पर्य यह निकला कि जब आजकल धर्म का प्रवचन करने वाले साक्षात् ऋषि नहीं हैं तो तर्क से काम लेना चाहिये। कर्त्तव्याकर्त्तव्य के सम्बन्ध में सब

पक्षों की अन्तिम परख तर्क से, अपनी बुद्धि से ही की जा सकती है। यह बात उचित है, क्योंकि अमुक शास्त्र धर्म का समर्थन करता है, ऐसा निर्णय भी तब होता है, जब हम पहिले तर्क द्वारा उस शास्त्र की प्रामाणिकता का निश्चय कर लेते हैं।

नयी पुस्तकों की तर्कहीनता

परन्तु पिछले कई सौ वर्षों में वेदों की जगह जिस वाङ्मय ने ले ली है वह तर्क से कोसों दूर भागता है। वेद इस लोक तथा परलोक के सम्बन्ध में जो कुछ उपदेश देता है उसके लिए भी श्रद्धा चाहिये, परन्तु पीछे की पोथियों का तो एकमात्र सहारा श्रद्धा ही नहीं अन्ध श्रद्धा है, आँख वाली श्रद्धा तो वहाँ ठहर ही नहीं सकती। अतिशयोक्ति की सीमा से भी आगे बढ़कर बात की जाती है। इस समय मेरे सामने काशीस्थ राजकीय प्रधान संस्कृत पाठशाला के प्रधानाध्यापक श्री पण्डित हृषीकेशो-पाध्याय ज्योतिषाचार्य द्वारा प्रवर्तित सं. 1999 का पञ्चाङ्ग है। पञ्चाङ्गों की पद्धति के अनुसार इसमें भी पर्वादि के लिए धर्मशास्त्र के अनुसार अनुकूल व्रतादि बतलाये गये हैं, प्रासङ्गिक वाक्य धर्मशास्त्रों से उद्धृत कर दिये गये हैं। इसमें भाद्रपद कृष्णपक्ष वाले पन्ने पर **उपवासे दन्तधावननिषेधः** शीर्षक देकर यह श्लोक उद्धृत किया गया है–

उपवासे तथा श्राद्धे न कुर्याद्दन्तधावनम्।
दन्तानां काष्ठसंयोगो दहत्यासप्तमं कुलम्।।

अर्थात् उपवास तथा श्राद्ध के दिन दन्तधावन (दतुवन) नहीं करना चाहिये। ऐसे अवसर पर दाँतों का लकड़ी से संयोग सात पीढ़ियों तक को भस्म कर देता है।

जिसने इस श्लोक को रचा वह भी पण्डित रहा होगा, उद्धृत करने वाले के पाण्डित्य में शङ्का की जा सकती ही नहीं। यह धर्म की शिक्षा है? अब इसको कौन समझदार अपनी बुद्धि में उतार सकता है? एक ओर वेदों की मीमांसा करने वाले महामुनि जैमिनि यह कहते हैं कि विश्व में सुख, दुःख, इहलोक, परलोक केवल वेदोक्त धर्माधर्म के पालन-अपालन पर निर्भर करता है, दूसरी ओर यह बतलाया जाता है कि रामनवमी के दिन जो मनुष्य व्रत नहीं करता वह कुम्भीपाक नरक में पड़ता है– **उपोषणं न कुरुते कुम्भीपाकेषु पच्यते**। एक रामनवमी को व्रत न करना सारे सत्कर्मों पर पानी फेर देता है। वेद कहता है–

तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते।
विष्णोर्यत्परमं पदम्।

– ऋ. 1/22/21

अर्थात् पापहीन तपस्वी योगी उसको प्राप्त होते हैं जो विष्णु का परमपद है। परन्तु नया उपदेश यह कहता है–

यः करोति तृतीयायां विष्णोश्चन्दन पूजनम्।
वैशाखस्य सिते पक्षे स याति हरिमंदिरम्।।

जो वैशाख के शुक्लपक्ष की तृतीया को विष्णु का चन्दन पूजन करता है, वह विष्णुलोक को जाता है। नागपञ्चमी को नाग की पूजा करने का यह फल है कि– सात पीढ़ियों तक सर्प का भय नहीं रह जाता।

आसप्तमात्कुले तस्य न भयं सर्पतो भवेत्।

यह नवनिर्मित शास्त्र का वचन है।

धर्म के नाम पर अधर्म

ऐसे ऐसे सैकड़ों उदाहरण दिये जा सकते हैं। मैं जानता हूँ कि इनमें से किसी एक बात पर पूरी श्रद्धा रखने वालों की संख्या बहुत बड़ी नहीं मिलेगी परन्तु इनका संयुक्त परिणाम वही हुआ है जो इस निबन्ध में निर्दिष्ट है। लोगों की बुद्धि को दुर्बल और भ्रष्ट करने में अपनी ओर से कुछ उठा नहीं रखा गया है। वेद की पोथी ही नहीं गयी वह पोथी जिन गुणों का प्रतीक थी वह गुण भी चले गये। धर्म के लिए सत्य, दृढ़ता, तप, श्रम की आवश्यकता नहीं रह गयी, सब काम सस्ता हो गया। सस्ते का अर्थ यह नहीं है कि पैसा कम लगने लगा वरन् यह कि ऐसे ऐसे लटके निकल आये जिनसे बात की बात में स्वर्ग और विष्णु आदि लोक प्राप्त हो जाते हैं, सब पापों का क्षय हो जाता है, अपने दैनिक जीवन में कोई अन्तर नहीं पड़ता, झूठ कपट छोड़ने की कोई आवश्यकता नहीं होती। एक उदाहरण लीजिये– आज उत्तर भारत और महाराष्ट्र में सत्यनारायण- व्रत और उसकी कथा सर्वत्र लोकप्रिय है। मुझे मद्रास का ठीक पता नहीं है। लोग एक दिन व्रत रहते हैं, सत्यनारायण की पूजा करते हैं और व्रत के माहात्म्य की चार कहानियाँ सुनते हैं, इन्हीं को कथा कहते हैं। मुझे व्रत और पूजा के विषय में कुछ नहीं कहना है, उनका उपदेश नारद जी को साक्षात् विष्णु ने कलिकाल के जीवों के हितार्थ दिया है। माहात्म्य की कहानियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि पूजा से अभीष्ट की सद्यः सिद्धि होती है। कहानियों में तीन छोटी कहानियाँ हैं किन्तु एक साधु बनिया की कहानी लम्बी है। परन्तु अब कहानियों की ओर ध्यान दीजिये। किसी कहानी में कहीं एक जगह भी भगवान् सत्यनारायण किसी से यह नहीं कहते कि तू सत्य बोला कर, नहीं तो तेरा व्रतोपवास मैं स्वीकार न करूँगा। साधु बनिया अपने जामाता के साथ जहाज पर माल ले जाता है और अपार धन कमाकर लौटता है। व्यास जी ने कहा है कि–

नाच्छित्वा परमर्माणि, नाकृत्वा कर्म दुष्करम्।
नाहत्वा मत्स्यघातीव, प्राप्नोति महतीं श्रियम्॥

बिना दूसरे के मर्म का छेदन किये, बिना दुष्कर कर्म किये, बिना मछुआरे की भाँति अपने हित के लिए सैकड़ों के प्राण लिये, बहुत धन नहीं कमाया जा सकता।

व्यास जी विष्णु के अंशावतार थे, इसलिये उनकी कही हुई बात श्री सत्यनारायण देव को भी ज्ञात ही रही होगी, पर वह बनिये से यह एक बार भी नहीं पूछते कि तुमने इतना रुपया कैसे कमाया,

न उसकी भर्त्सना करते हैं। उन्हें बस इतने से काम है कि मुझको जो वचन दिया गया था वह पूरा हो, मेरा भाग ठीक तिथि पर मिल जाना चाहिये। इस कथा के प्रचार से जो अधर्म फैला है वह हमारे सामने है। सत्यनारायण की पूजा से वही काम लिया जाता है जो सरकारी अहलकारों को रिश्वत देने से निकाला जाता है तुम जो चाहो करो, हम आँख बन्द कर लेंगे, परन्तु हमारा हिस्सा देते जाओ। पुलिस रिश्वत लेकर इस लोक में मामला दबा देती है, सत्यनारायण भगवान् पर लोक में सब अपराधों को क्षमा करा देते हैं और इस लोक में ऊपर से पुरस्कार दिलवाते हैं। साधु बनिया ने न जाने किस किस उपाय से रुपया कमाया था परन्तु पूजा करके उसने भगवान् का मुँह बन्द कर दिया था, आज भी लोग झूठा मुकद्दमा जीतकर उतने ही चाव से सबन्धु बान्धव व्रत करते हैं और कथा सुनते हैं। यह ध्यान देने की बात है कि सत्यनारायण की पूजा के साथ हरिश्चन्द्र की कथा नहीं सुनी जाती।

इस विषय में मेरे पास विद्वद्वर पण्डित विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का पत्र आया है। उससे इस कथा के ऊपर अच्छा प्रकाश पड़ता है। वह लिखते हैं कि ईस्वी ग्यारहवीं शताब्दी में बङ्गाल में सत्यपीर नाम के किसी व्यक्ति ने नया मत चलाया। उसने संस्कृत की कई पोथियाँ लिखवायीं और बड़ी कूटनीति से काम लेता था। उसके मत के प्रसार को रोकने के लिए ब्राह्मणों ने यह उपाय किया कि उसकी पोथियों को ज्यों का त्यों लेकर आदि अन्त में कुछ जोड़कर पौराणिक रूप दे दिया। इस प्रकार उन पर से नवीनता की छाप हट गयी और नये सम्प्रदाय में जाने से बचा लिये गये। सत्यनारायण कथा भी सत्यपीर की देन है। उसमें विष्णु-नारद संवाद ब्राह्मणों का जोड़ा हुआ है और 'सत्य-फकीर' की जगह दण्डी स्वामी रख दिये गये हैं। नवीन रचना होने से ही स्कन्द पुराणे रेवाखण्डे लिखे रहने पर भी अभी यह स्कन्दपुराण के किसी संस्करण में स्थान नहीं पा सकी है। 'रम्भाफलम्' 'अभावे शालिचूर्णं वा', 'गत्वा सिन्धुसमीपे', रत्नसारपुरे रम्ये' आदि वाक्य उसके बङ्गीय उद्भव का अन्तःसाक्ष्य दे रहे हैं। मैं इन बातों का ज्ञान कराने के लिए पण्डित विश्वनाथप्रसाद जी का बहुत ऋणी हूँ। बहुत से पाठकों को भी यह बात रोचक प्रतीत होगी। मेरी आशा है कि अब विद्वज्जन इस कथा से हिन्दू समाज को छुट्टी दिलाने का प्रयत्न करेंगे। मिश्रजी के शब्दों में इससे कहीं उत्तम और प्रभावयुक्त कथाएँ पुराणों में हैं। कर्म की ओर लगाने वाली कथाएँ हैं पर देश की पराधीनता, दरिद्रता और अज्ञान आदि के फलस्वरूप इसकी छानबीन करके कोई उनके प्रसार का प्रयत्न ही नहीं करता।

●

(क्रमशः)

वेद और विज्ञान

पं0 सूर्यबली पाण्डेय
जौनपुर

(पूर्व अंक का शेष)

वेद में विमान विद्या

महाकवि कालिदास ने अपने अभिज्ञान शाकुन्तलम् में महाराज दुष्यन्त के इन्द्रलोक से वायुयान द्वारा ही हस्तिनापुर वापस आने का उल्लेख किया है। इतना ही नहीं, भगवान् शंकराचार्य के समय तक हम भारत में वायुयानों को सामान्य उड़ान भरते हुए देखते हैं, स्वयं भगवान् शंकराचार्य ने श्री मण्डन मिश्र को शीघ्र परास्त करने के लिए प्रयाग से माहिष्मती नगरी को वायुयान द्वारा ही प्रस्थान किया था। शंकर दिग्विजय में उसका इस प्रकार उल्लेख है :–

ततः प्रतस्थे भगवान् प्रयागात्,
तं मण्डनं पंडितमाशु जेतुम्।
गच्छन् खसृत्या पुरमालुलोके,
माहिष्मतीं मण्डनमण्डितां सः।

इसमें 'गच्छन् खसृत्या' का स्पष्ट अर्थ आकाशमार्ग से जाते हुए के अतिरिक्त और क्या हो सकता है? पर आकाशमार्ग से तो वायुयान द्वारा ही जाया जा सकता है। अतः भारत में वायुयानों की परम्परा वैदिककाल से लेकर विक्रम की 7वीं शताब्दी तक स्पष्ट दीखती है। इसे हम वेद की वैज्ञानिकता का ही सुपरिणाम कहेंगे। इतना ही क्या? परवर्ती साहित्य में इस सम्बन्ध में कितनी प्रगति दिखती है, इसके लिए वाराणसेय संस्कृत कॉलेज के भूतपूर्व प्राचार्य महामहोपध्याय श्री आचार्य खिस्ते द्वारा लिखित 19.09.1952 में प्रकाशित ''आज'' के एक लेख से कुछ अंश उद्धृत करना आवश्यक समझता हूँ। आप लिखते हैं कि, ''मैसूर की संस्कृत ग्रन्थानुसंधानशाला की ओर से देवनागरी में भारद्वाज कृत एक विमानशास्त्र का ग्रन्थ उपलब्ध हुआ है इसमें 8 अध्याय, 500 सूत्र तथा 100 अधिकाएँ हैं। इसमें 'रुक्म' 'शकुन' 'सुन्दर' आदि अनेक विमानों का उल्लेख है। भारद्वाज कृत विमानों में 31 प्रकार के यन्त्रों का प्रयोग होता है। इसके निर्माण के लिये 16 प्रकार की धातुओं का प्रयोग किया जाता है। विमानों के मानचित्र भी उसमें दिये हुए हैं। ऐसे विमानों की उसमें चर्चा है जो किसी प्रकार भी छिन्न-भिन्न नहीं होते। **मैसूर पुस्तकालय में विमानशास्त्र विषयक 24 ग्रन्थों का पता चला है**। वहीं से वहाँ के पंडित श्री आनेकल सुब्रह्मण्यम् शास्त्री जी ने भारद्वाज कृत '**यन्त्र सर्वस्व**' नामक ग्रन्थ उपलब्ध किया है। उसमें विमान प्रकरण भी है। उसके सम्पादक महोदय का मत है कि **उस समय विमान चालकों**

के पास दूरवीक्षण यन्त्र और रेडियो वायरलेस भी प्राप्त थे। वैमानिक प्रकरण का नाम ''**वैमानिक तत्व संग्रह**'' था। उससे निम्नलिखित श्लोक उद्धृत किये जाते हैं–

अष्टाध्याय समायुत्तं अति गूढं मनोहरम्।
जगतां मति संधानकारणं शुभदं नृणाम्।।
अनायासात् व्योम यान स्वरूप ज्ञान साधनम्।
नाना विमान वैचित्र्य रचना क्रम बोधकम्।।
वैमानिकाधिकरणं कथ्यतेऽस्मिन् यथा विधि।
पृथिव्यप्स्वन्तरिक्षेषु खगवत् वेगतः स्वयम्।।
यः समर्थो भवेत् गन्तुम् स विमान इति स्मृतः।
देशात् देशान्तरं तद्वत् द्वीपात् द्वीपान्तरं तथा।।
लोकात् लोकान्तरं चापि योऽम्बरे गन्तुमर्हति।
स विमान इति प्रोक्तः खेटशास्त्रविदाम्वरैः।।

अर्थात् आठ अध्यायों से युक्त वह ग्रन्थ अतिगूढ और सुन्दर है। उसके पढ़ने से सहज ही में वायुयान के आकार का बोध हो जाता है। नाना प्रकार के विमानों की रचना वैचित्र्य का उसमें बोध हो जाता है। इस ग्रन्थ में एक वैमानिक अधिकरण कहा जाता है। उसमें बतलाया गया है कि जो पृथिवी, जल और आकाश में पक्षियों की भाँति स्वयं चला करता है, उसे विमान नाम से स्मरण किया जाता है। इस प्रकार जो आकाश विद्या के विशेषज्ञ जन हैं वे बतलाते हैं कि जो यान एक देश से दूसरे देश, एक द्वीप से दूसरे द्वीप और एक लोक से दूसरे लोक तक जाने में समर्थ है उसी को विमान कहा जाता है।

महर्षि भारद्वाज के अन्दर इस प्रकार विमानशास्त्र लिखने की क्षमता कहाँ से आयी इसके उत्तर के लिए बड़ौदा के राजकीय पुस्तकालय से प्राप्त उसी '**यन्त्रसर्वस्व**' की एक खंडित प्रति श्री बोधानन्द की वृत्ति के साथ प्रकाशित हुई है। वृत्तिकार श्री बोधानन्द ने लिखा है कि– ''**महर्षि भारद्वाज ने वेद समुद्र को मथ कर जो नवनीत निकाला है वही यह यन्त्रसर्वस्व है।**'' क्या अब भी वेद की वैज्ञानिकता पर किसी को सन्देह रहेगा? इतना ही नहीं, महर्षि भारद्वाज ने स्वयं तो लेखनी उठायी ही है, उनके पूर्व भी अनेक ऋषियों ने इस विषय पर व्यापक ग्रन्थ लिखे हैं। महर्षि भारद्वाज ने स्वयं अपने ग्रन्थ '**यन्त्रसर्वस्व' के प्रथम अध्याय में विमानशास्त्र सम्बन्धी 25 प्राचीन ग्रन्थों का उल्लेख किया है**। उनमें– **विमान चंन्द्रिका**, **व्योम यान तन्त्रम्**, **यन्त्र कल्पः**, **यान बिन्दुः**, **खेटायन प्रदीपिका**, **व्योम-यानार्कप्रकाश** आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। महर्षि भारद्वाज कृत एक ''**अंशुबोधिनी**'' नामक प्राचीन ग्रन्थ उपलब्ध हुआ है, उसके अन्दर अनेक विद्याओं के लिए अनेक अभिकरण हैं। उनमें एक विमानाभिकरण भी है। उस अभिकरण में ''**शक्त्युद्गमोऽष्टौ**'' नामक एक सूत्र है। इस सूत्र पर महर्षि बोधायन ने वृत्ति लिखी है। जो इस प्रकार है :–

शक्त्युद्गमो, भूत वाहो धूमयानः शिखोद्गमः।
अंशु वाहस्तारा मुखो मणि वाहो मरुत्सखः।
इत्यष्टाधिकरणे वर्गाण्युक्तानि पूर्व शास्त्रतः।

अर्थात् उक्त सूत्र का भाष्य करते हुए महर्षि बोधायन लिखते हैं कि विमान रचना और आकाश में गति करने के आठ प्रकार हैं :–

1. शक्ति उद्गम– बिजली से चलने वाला, **2. भूत वाह–** अग्नि, जल, वायु आदि से चलने वाला, **3. धूम्रयान–** वाष्प से चलने वाला, **4. शिखोद्गम–** पंच शिखी के तेल से चलने वाला, **5. अंशुवाह–** सूर्य की किरणों से चलने वाला, **6. तारा मुख–** उल्का रस अर्थात् चुम्बक से चलने वाला, **7. मणिवाह–** सूर्यकान्त और चन्द्रकान्त मणियों से चलने वाला, **8. मरुत् सखः–** केवल वायु से चलने वाला। इस प्रकार विज्ञानवारिधि ऋषियों ने वेद विज्ञान के बीज से उपलब्ध विज्ञान की सहायता लेकर 8 पदार्थों से यन्त्र संचालन की क्रिया सम्पन्न की थी। पाठक विचार करें कि, क्या आज का विज्ञान वहाँ तक पहुँच सका है? श्री शुक्राचार्य ने शुक्रनीति (अ. 1 श्लोक 367) में राजा का कर्त्तव्य बताते हुए लिखा है :–

अयुतं क्रोशजां वार्तां हरेदेकदिनेन वै।

अर्थात् 10 हजार कोस की दूरी पर घटित घटना का समाचार एक दिन में जान ले। क्या बिना रेडियो के यह कार्य सम्भव है? अतः शुक्रनीति के द्वारा रेडियो का अस्तित्व भी प्राचीन काल में था सिद्ध होता है जो हमारी वैज्ञानिकता के लिए प्रबल प्रमाण है।

वेदों में सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण का भी स्पष्ट उल्लेख पाया जाता है। ऋग्वेद के 5वें मण्डल में सूर्यग्रहण का इतना स्पष्ट वर्णन मिलता है कि वर्तमान वैज्ञानिक युग का कोई भी नक्षत्र-विचार-विशारद उसकी व्याख्या चाहे जिस रूप में कर ले, किन्तु मौलिक तत्त्व में कोई नई बात नहीं ला सकता। उदाहरण के लिए निम्नलिखित मन्त्र द्रष्टव्य हैं–

यत् त्वा सूर्य स्वर्भानुः तमसा विध्यदासुरः।
अक्षेत्रविद् यथा मुग्धो भुवनान्यदीधयुः।
(ऋ. 5/40/5)

अर्थात् हे सूर्य! जब तुझे आसुरी घने अन्धकार वाला स्वर्भानु (**स्वर्गे भानुः दीप्तिर्यस्या सः स्वर्भानुः राहुः**) ग्रस लेता है तब अन्यों द्वारा इतर लोक तो देखे जाते हैं परन्तु अक्षेत्रविद् अथवा रेखागणित न जानने वाला अपने स्थान पर मूर्ख सा बना खड़ा रहता है। इस स्थल पर स्वयं राहु के द्वारा सूर्य के ढक लेने का स्पष्ट उल्लेख है। पुनः ऋग्वेद कहता है–

स्वर्भानोरध यदिन्द्र, माया अवो दिवो वर्तमाना।
अवाहन् गूढं सूर्यं तमसाऽप व्रतेन तुरीयेन
ब्रह्मणा विन्ददत्रिः। (ऋ. 5/40/6)

अर्थात् हे सूर्य! विज्ञान के जिज्ञासु मनुष्य! जब इस स्वर्भानु नामक राहु की माया रूप घनी छाया सूर्य मण्डल के नीचे वर्तमान रह कर उसे छिपा लेती है तब उस गूढ़ तम से ढके उस सूर्य को अन्धकार से भी पार निकलने में समर्थ तुरीय यन्त्र से नक्षत्र-विद्या विशारद अत्रि सरलता से देख तथा समझ लेता है। इस मन्त्र में तुरीय और अत्रि दो पारिभाषिक शब्द आये हैं। **तुरीय उस यन्त्र को कहते हैं जिसे आज दूरबीन यन्त्र कहा जाता है** और उस दूरबीन का प्रयोग कर जो दूर स्थित पदार्थों का सम्यक् निरीक्षण करता है उस व्यक्ति को अत्रि पद से व्यक्त किया गया है। इस तुरीय और अत्रि पद का विशद विवेचन धारा नगरी के अधीश्वर महाराज भोज ने, जो महान् पंडित हो चुके हैं, अपने द्वारा प्रणीत महान् ग्रन्थ ''**समरांगण सूत्रधार**'' में भली प्रकार किया है। वेद ने पुनः इस विषय पर प्रकाश डालते हुए कहा है–

यं वै सूर्य स्वर्भानुस्तमसा विध्यदासुरः।
अत्रयस्तमन्वविन्दन् नह्यान्ये अशक्नुवन्।।

(ऋ. 5/40/9)

अर्थात् जिस सूर्य पिण्ड को घनी छाया वाला स्वर्भानु अपनी छाया से ढक लेता है उसे अत्रि (रेखा गणित विशारद) ही जान पाते हैं, सामान्य जन ऐसा नहीं कर सकते। उक्त मन्त्रों से स्पष्ट है कि ग्रहण लगने पर तुरीय यन्त्र से अत्रिगण सूर्य का सम्यक् दर्शन और अध्ययन करते थे। अभी सन् 1971 में भारतवर्ष के अन्दर 82 वर्षों के पश्चात् पूर्ण सूर्यग्रहण लगा था। उस अवसर पर अनेक देशी तथा विदेशी अत्रिगण अपने-अपने विशिष्ट तुरीय यन्त्रों के सहारे सूर्य का अध्ययन करने के लिए निरत हुए थे। वह तुरीय यन्त्र क्या है? इसका सम्यक् निरूपण महाराज भोज के अतिरिक्त परम वैदिक विज्ञान वेत्ता और ज्योर्तिविद् श्री भास्कराचार्य ने अपने ''**सिद्धान्त शिरोमणि**'' नामक ग्रन्थ में निम्नलिखित प्रकार से किया है–

दृगुच्च मूलं नलके निवेश्य,
वंशद्वयाधारमथास्य रन्ध्रे।

अर्थात् दो बाँस पोलों के आधार वाली नली को आँख के ऊपरी भाग में जमा दें। तब उसके छेद में नेत्र गड़ाकर आकाश की ओर देखें। इसी प्रकार पानी में डूबी वस्तु को देखने की विधि कहेंगे। शिल्प संहिताकार ने तो इसका नाम '**दूरदर्शक यन्त्र**' देकर उसके निर्माण की विधि भी बतलाई है। उसे इस प्रकार देखें :–

मनोर्वाक्यं समाधाय, हृद्येवं शिल्पीन्द्र शाश्वतः।
यन्त्रं चकार सहसा दृष्टये दूरदर्शनम्।।
पलालाग्नौ दग्ध मृदा कृत्वा काँचमनश्वरम्।
शोधयित्वा तु शिल्पीन्द्रो नैर्मल्यं साधयेत् पुनः।।
चकार बलवत् स्वच्छं पातनं सूर्य विस्मृतम्।
वंशपर्व समाकारं धातु दण्ड प्रकल्पितम्।।

तत्पश्चात् अग्र मध्येषु मुकुरं च विशेषतः।
सन्धये त्रिवृतं यन्त्रं दूरं पश्येदशेषतः॥

अर्थात् एक उत्तम शिल्पकार मन और वाणी को समाहित कर दूर तक देखने के लिए यन्त्र बनाता है। पहले वह तीव्र अग्नि में मिट्टी को दग्धकर मजबूत काँच बनाता है फिर उसका शोधन का उसकी सफाई करता है अच्छी प्रकार उसे शुद्ध कर बाँस के पोर के बराबर धातु का दण्ड बनाकर आगे और मध्य भाग में शीशा लगाकर और उसे तेहर का यन्त्र बना दूर-दूर की वस्तुओं को सम्पूर्ण रूप में देखता है। इस प्रकार वेद के आधार पर बनी हुई शिल्प संहिता तुरीय यन्त्र की संरचना बतला और उसके द्वारा सौरमण्डल का सम्यक् निरीक्षण करा, वेद की वैज्ञानिकता का असाधारण उद्घोष करती है। क्या अब भी कहा जा सकता है कि वेद विज्ञान विहीन है?

ऊपर के परिच्छेदों में जहाँ अनेक वैज्ञानिक विषयों का जनक वेद सिद्ध हो रहा है, वहीं अन्यत्र उसे रसायन विद्या का भण्डार भी सिद्ध किया जा सकता है। उदाहरण के लिए एक ही प्रमाण पर्याप्त होगा। ऑक्सीजन और हाइड्रोजन नाम की दो गैसें हैं। वर्त्तमान विज्ञान यह बतलाता है कि यदि निश्चित मात्रा में दोनों गैसों को मिला दिया जाय तो उनके मिलने से जल का निर्माण हो जाय। इस प्रकार की संरचना से वैज्ञानिक जगत् कभी-कभी अपनी अनभिज्ञतावश हमारी प्राचीन मान्यता का उपहास भी करता है और कहता है कि पुराकालीन लोगों ने जिस जल को तत्त्व कहा था, वर्त्तमान विज्ञान ने उसे दो खण्डों में विभक्त करके दिखा दिया। अतः प्राचीन मान्यता भ्रान्ति मूलक सिद्ध हो गयी। सच तो यह है कि हमारी प्राचीन मान्यता ने जल को कभी भी तत्त्व नहीं कहा है। वह तो पृथिव्यादि पंच भूतों में से एक भूत कहा गया है। पर दुर्जन तोष न्याय से यदि यह स्वीकार भी कर लें तो भी वर्त्तमान विज्ञान को लाभ न होगा। वर्त्तमान विज्ञान ने तो इस विषय में पिष्टपेषण मात्र किया है। वेद ने स्वयं बतलाया है कि जल दो पदार्थों का मिश्रण है और विद्युत् द्वारा इस जल को फाड़ कर दोनों पदार्थ पृथक् किए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए निम्नलिखित प्रमाण द्रष्टव्य हैः–

मित्रं हुवे पूतदक्षं, वरुणं च रिशादसं।
धियं घृताचीं साधन्ता।

– ऋ. 1/2/7

इस मन्त्र में मित्र, वरुण और घृताची पद पड़े हैं। घृताची के लिए निरुक्ताचार्य महर्षि यास्क कहते हैंः–

घृतमिति उदकनाम। जिघर्तेः सिंचति कर्मणः।

(7/24)

अर्थात् घृत नाम जल का है। मित्र पद का अर्थ

वर्त्तमान ऑक्सीजन और वरुण का अर्थ हाइड्रोजन है। इस प्रकार मित्र और वरुण को मिला कर '**घृताचीं साधन्ता**' जल बनाया जाता है। इस मन्त्र में स्पष्ट रूप से जल को मित्र और वरुण का मिश्रण कहा है। इसी प्रकार अथर्ववेद में वर्षा को मित्र और वरुण के मिलन का परिणाम बतलाया गया है। मन्त्र इस प्रकार हैः–

न वर्ष मैत्रावरुणं ब्रह्मज्यं अभि वर्षति।

(अथर्व. 5/19/15)

अर्थात् (ब्रह्मज्यं) ब्रह्म हत्या करने वाले के राज्य में (मैत्रावरुणं) ऑक्सीजन और हाइड्रोजन से मिल कर बनने वाले जल की वर्षा भी नहीं होती। इस मन्त्र से भी स्पष्ट है कि वेद जल को मित्र और वरुण का मिश्रण मानता है।

वर्त्तमान विज्ञान यह मानता है कि जल को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। यह बात वेद में पूर्व से ही विद्यमान है। ऋग्वेद कहता हैः–

उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठः,
उर्वश्या ब्रह्मन् मनसोऽधिजातः।

(ऋ. 7/33/11)

इस मन्त्र में वसिष्ठ को मित्र और वरुण से उत्पन्न हुआ तथा उर्वशी के मन से अधिजात कहा गया है। **मित्र और वरुण से अभिप्राय ऑक्सीजन और हाइड्रोजन से है**। यहाँ वसिष्ठ से जल तथा उर्वशी से विद्युत् अभिप्रेत है। उचित मात्रा में उक्त दोनों गैसों के मिलने और विद्युत् के सहकार से जल बनता और उसी विद्युत् के प्रयोग से जल को फाड़ उक्त दोनों गैसें पृथक् की जाती हैं।

इस प्रकार हमने देखा कि वेद के अन्दर पृथिवी की परिक्रमा करने तथा उसका सूर्य की ज्योति से ज्योतित होने का स्पष्ट उल्लेख है। वेद में गुरुत्वाकर्षण का विज्ञान भी पाया जाता है। वेद में वायुयान और जलयानों की संरचना तथा उनके संचालन का स्पष्ट उल्लेख ही नहीं, अपितु उनको आधार मान कर भारतीय मनीषियों ने उस सम्बन्ध में बृहद् ग्रन्थों का निर्माण किया था जिनकी परम्परा में शोध द्वारा अनेक यन्त्र-शास्त्र उपलब्ध किये जा सकते हैं। **वेद में सूर्य और चन्द्र ग्रहणों का स्पष्ट उल्लेख ही नहीं, अपितु, 'तुरीय' और 'अत्रि' जैसे परिभाषिक शब्द भी पाये जाते हैं जिससे विदित होता है कि तुरीय यन्त्रों से सूर्य अथवा चन्द्र का ग्रहण अवस्था में सम्यक् निरीक्षण कर उनका अध्ययन किया जाता था और ऐसा करने वाले अत्रि नाम से विख्यात थे**। वेद में जल बनाने का उपकरण और उसकी विद्या का स्पष्ट उल्लेख है। इसी प्रकार जितना अधिक शोध किया जाएगा, वेद उतने ही विज्ञान से परिपूर्ण पाया जाएगा और तभी हम भगवान् मनु के शब्दों में स्वाभिमान पूर्वक कह सकेंगे कि, '**सर्वज्ञानमयो हि सः**'। अर्थात् वेद में सारी विद्याओं की राशि भरी है। ●

महिला-सशक्तीकरणं राष्ट्रस्य विकासश्च

– सञ्जीवनी आनन्द
एम.ए (संस्कृत) प्रथम वर्ष

[काशी हिन्दू विद्यालय के युवा महोत्सव 2012 में अनेक प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया जिसमें संभाषण, वाद-विवाद, काव्यपाठ, संगीत, काव्य रचना आदि प्रतियोगितायें सम्मिलित थीं। इस प्रतियोगिता का सामूहिक नाम संस्कृति था जिसमें अपने महाविद्यालय की **कु. प्रियंका** व **कु. सञ्जीवनी आनन्द** जो इस समय वहाँ से संस्कृत में (एम.ए) कर रही हैं, उन्होंने भी भाग लिया और प्रथम स्थान प्राप्त किया। पुनः नियमानुसार संस्कृति प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले छात्र-छात्राओं को ही जहाँ स्पदंन में भाग लेने की अनुमति होती है जो कि विद्यार्थियों के लिए एक बहुत बड़ी उपलब्धि मानी जाती है उसमें भी हमारी कन्याओं ने प्रथम स्थान प्राप्त कर **पाणिनि कन्या महाविद्यालय** के गौरव को बढ़ाया। यह आलेख 24 घण्टे पूर्व दिये गये विषय पर हुई प्रतियोगिता का छोटा सा प्रयास है। – **सम्पा०**]

आसीत् प्राचीन काले महिलानां गौरवास्पदं स्थानम्। पुरा भारत देशे यत्र ऋषयः श्रूयन्ते तत्र ऋषिकाः अपि श्रूयन्ते स्म यत्र आचार्यः श्रूयते तत्र आचार्या अपि श्रूयते स्म। गार्गी, मैत्रेयी, घोषा, अपाला, लोपामुद्रा, एतादृश्यः नार्यः आत्मोन्नतिं प्रापन् अपि च वैदिक काले वैदिकयुग निर्माणाय साहाय्यं ददुः। अतएव अथर्ववेदे चोक्तम्– **स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ**। ताभ्यः उच्चशिक्षायाः प्रविधानम् आसीत्। परं मध्यकाले तासां स्थितिः दयनीया समभवत। ताः गृहकार्यपराः दासीवत् समभवन्। तस्मिन्काले जनानां मानसिकस्थितिः अतीव निम्ना जाता येन कारणेन अनेकानेक कुविचाराणां प्रभावः तदानीन्तनेषु ग्रन्थेषु अवलोक्यते तथा च तुलसीदासेन उक्तम्– **ढोल गंवार शूद्र पशु नारी ये सब ताडन के अधिकारी**। प्रायशः एकशताब्दी पूर्वं नारी- स्वातन्त्र्यस्य स्वायत्तताया श्च आन्दोलनं प्रारब्धम्। वयं पश्यामः एकस्य परिवारस्य निर्माणम् मातृशक्तिरेव वर्त्तते उक्तं यत् माता निर्माता भवति यस्या अभावे नास्ति सम्भवः कुटुम्बस्य निर्माणं। यदि परिवारस्य निर्माणं वाञ्छामः तर्हि मातृशक्तेः महती आवश्यकता वर्त्तते। तेनैव परिवारेण, समाजस्य, देशस्य, सम्पूर्णस्य विश्वस्य च उन्नतिः विकासश्च सम्भवति पश्यन्तु तत्र भवन्तो भवन्तः यदि सर्वत्र महिला शक्तिरेव वर्त्तते तर्हि महिला सशक्तीकरणं राष्ट्रस्य विकासश्च कथं न सम्भवति।

मान्याः! यदि महिला सशक्तीकरणस्य वार्ता क्रियते तर्हि सर्वप्रथमं वक्तुं शक्यते यद् एष महिला शब्दः मह पूजायाम् इत्येतस्मात् धातोः निष्पन्नः तत्र च या महनीयत्वं प्रतिपादयति सैव महिला इत्युच्यते। सा च कथं महनीया स्यादिति पृष्टे अहं वक्तुं शक्नोमि यत् मातुः क्रोडे एव राष्ट्रस्य पल्लवनं भवति यतोहि माता शिशोर्निर्माणं करोति मन्ये तेन राष्ट्रस्य एव निर्माणं जायते। अतः महिला सशक्तीकरणस्य हेतुस्तु महिला शब्दे एव दरीदृश्यते।

सभेयाः! अवलोकयामो वर्त्तमानसमये वयं स्त्री-शिक्षा अहर्निशं वर्धते एव। प्रतिवर्षं सहस्त्रशो नार्यो ज्ञान-विज्ञान-कला संकाये उत्कृष्टोपाधिभिर्विभूष्यन्ते। यथा- विज्ञानक्षेत्रे कल्पना चावला, सुनीता विलियम्स। व्यवसाय क्षेत्रे– इन्द्रा नुई, प्रशासनकार्ये- किरण बेदी या हि वैदेशिक रेमन मैग्सेसे पारितोषिकेण पुरस्कृता, क्रीडाक्षेत्रे- सानिया मिर्जा, साईना नेइवाल इत्यादयः स्वीयक्षेत्रेषु

महतीं क्षमतां द्योतयन्ति। न केवलमेतदेव अपि तु ताः राजनीतिकक्षेत्रेऽपि सर्वासु दिक्षु दरीदृश्यन्ते। देशस्य सर्वोच्चस्थाने स्थिता **श्रीमती प्रतिभा पाटिल** केन विस्मर्तुंशक्यते। यस्याः हस्ते न केवलं नारीणामपितु सम्पूर्णराष्ट्रस्य सशक्तीकरणत्वं दृश्यते। महिला सशक्ती-करणस्य या भूमिका वर्त्तते सा आसु महिलासु दृश्यते। न केवलं दृश्यते एव अपितु तेन सशक्तीकरणेन राष्ट्रस्य विकासोऽपि सम्भवति। तदेवं सत्यामपि जागरूकतायां भ्रूणहत्या दहेजप्रथादि अमानवीय कृत्यैः समाजे असंगतिः अपि अवलोक्यते। भ्रूणहत्या, दहेज हत्यादि माध्यमेन स्त्रीणां न्यूनता भवति तेन च महिलापुरुषयोर्मध्ये वैषम्यं परिलक्ष्यते तस्मादेव च प्रारभ्यते समलैङ्गिकतायाः दुर्भावना। एतेन राष्ट्रस्य विकासावरोधो भवति। अतः एतेषां निराकरणाय सर्वथा सामाजिकम् आन्दोलनम् अपेक्ष्यते।

तस्मात् उपर्युक्तदोषनिराकरणार्थं महिला सशक्ती-करणार्थं च आरक्षणव्यवस्था तु अनिवार्या एव वर्त्तते। यथा देशे अनुसूचितजातीनां, अनुसूचितजन जातीनां कृते आरक्षण व्यवस्था वर्त्तते तथैव विधानसभासु लोकसभायां च महिलानां कृते आरक्षणम् आवश्यकम् अस्ति। साम्प्रतं अस्यां व्यवस्थायां साफल्यमपि प्राप्तम्।

अतः अन्ते अहं वक्तुं प्रभवामि यत् राष्ट्रस्य विकासे महिला-सशक्तीकरणं न इदानीमेव अपितु प्राचीनकालतः अद्यावधि दृश्यते।

●

(पृष्ठ 4 का शेष)

प्रीति, तृप्ति, अवगम, प्रवेश, श्रवण, स्वाम्यर्थ, याचना, क्रिया, इच्छा, दीप्ति, अवाप्ति, आलिंगन, हिंसा, दान, भाग, वृद्धि। इसलिये **ते नः अवन्तु इस वेद वाक्य के 19 प्रकार के अर्थ होंगे**। इसका अर्थ वे हमारी रक्षा करें यही नहीं अपितु वे हमें गति दें, कान्ति दें, प्रीति दें, तृप्ति दें, बुद्धि दें आदि आदि बहुत से अर्थ होंगे यही इस वैदिक भाषा की विशेषता है। क्योंकि वेद के सभी शब्द यौगिक हैं। मन्त्र में ये देव हमारी रक्षा करें यह अर्थ प्रधान है इसे प्रदर्शित करने के लिये मन्त्र में दुबारा **ते नः पान्तु** वे हमारी रक्षा करें यह कहा है। वस्तुतः रक्षा के अन्दर वे सभी अर्थ समाहित हो जाते हैं क्योंकि यदि वे हमारी रक्षा करना चाहते हैं तो वे हमें यथावश्यक गति भी देंगे, प्रीति भी देंगे, तृप्ति, दीप्ति, बुद्धि आदि सभी कुछ देंगे। लेकिन आवश्यकता है **तेभ्यः** उनके प्रति हमारा **स्वाहा** अर्थात् त्याग हो, समर्पण हो। यह परस्पर का आदान-प्रदान है। जिसमें पुरुषार्थ हमारा होगा पर सफलता की देन उसकी होगी। **तपःस्वाध्याय-ईश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः** (2/1) योग दर्शनकार पतञ्जलि मुनि ने भी यही कहा है कि तप (त्याग), स्वाध्याय (ज्ञान) हमारा होगा ईश्वर प्रणिधान (समर्पण) भी हमें करना होगा तब क्रिया में सफलता प्राप्त होगी।

ध्यान रहे! आध्यात्मिक जगत् में देव का अर्थ इन्द्रियाँ हैं आधिभौतिक जगत् में देव का अर्थ विद्वान् है तथा आधिदैविक जगत् में देव का अर्थ पृथिवी, जल, वायु, सूर्य, चन्द्र, आकाश आदि हैं। इन सबके प्रति यथायोग्य सेवा स्वाध्याय समर्पण ही हमें दिव्य बुद्धि वाला और दृढव्रती बना सकता है जिससे हम जीवन में अभ्युदय और निःश्रेयस् की सिद्धि के अधिकारी भी बनेंगे। ●

– आचार्या नन्दिता चतुर्वेदी

स्वतन्त्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका

– आशा रानी व्होरा

(क्रमशः)

छापामार लड़ाका रानी

भीमाबाई

भीमाबाई इंदौर की महारानी अहिल्या बाई होल्कर के दत्तक पुत्र तुकोजी राव के पुत्र यशवंत राव की पुत्री थीं। पिता ने उन्हें अस्त्र चालन विद्या और घुड़सवारी की शिक्षा बचपन में ही दे दी थी। यशवंत राव का सिंधिया, पेशवा और अंग्रेजों से कई बार संग्राम हुआ था। बालिका भीमाबाई युद्ध के व्यावहारिक ज्ञान में भी निपुण हो गई थी। पतिगृह में विधवा के रूप में जीवन व्यतीत करते हुए एक दिन उन्हें सूचना मिली कि उनके पिता की मृत्यु के बाद महल की एक दासी ने उनके राज्य पर अधिकार कर लिया है और राज्य में अव्यवस्था फैल गई है। भीमाबाई ने इंदौर के रेजीडेंट कर्नल मालकम से पिता के राज्य के संरक्षण की अनुमति माँगी, पर अंग्रेज तो अवसर की तलाश में रहते थे। उन्हें भीमाबाई का हस्तक्षेप कैसे सहन होता। अनुमति देने के बजाय अंग्रेजों ने होल्कर राज्य पर आक्रमण कर दिया।

1817 में महीदपुर में अंग्रेजों से लड़ाई हुई। जिसमें होल्कर सेना की हार हुई। पर भीमाबाई ने धीरज नहीं छोड़ा। साहस जुटाकर उन्होंने पुनः सेना का संगठन किया और जंगलों, पहाड़ों के मध्य अपना सैनिक शिविर बनाया। उन्हें छापामार युद्ध की भी जानकारी थी। वह छापे मारकर अंग्रेजों के खजाने व अन्य सामग्री लूटने लगीं। छापामार युद्ध में अंग्रेज सेना के कई सैनिक भी मारे गए, जिससे सर मालकम के कान खड़े हो गए। वह एक बहुत बड़ी सेना लेकर भीमाबाई को खोजने निकला और एक दिन रानी को जंगल में एक अंगरक्षक के साथ घुड़सवारी करते देख, घेर लिया गया। घेरा पूरा होता, इसके पूर्व ही रानी ने अंगरक्षक घुड़सवार को आदेश दिया और वह भाग निकला। अब रानी अकेली रह गई थी। उनके चारों ओर घेरा कसने लगा। जैसे ही घेरा पूरा हुआ, रानी का घोड़ा सर मालकम की ओर बढ़ने लगा। सभी ने समझा, रानी आत्म-समर्पण करने आ रही हैं। पर मालकम के निकट पहुँचकर रानी ने अचानक अपने घोड़े को जोर से एड़ लगाई और रानी का घोड़ा रानी को लिये-लिये मालकम के सिर के ऊपर से गुजरते हुए घेरा पार कर गया। जब तक सैनिक सम्भलते, रानी उनकी नजरों से दूर निकल चुकी थीं, इसके बाद रानी कहाँ गईं? इस बारे में कोई सन्दर्भ नहीं मिलता।

कित्तूर की वीर रानी

चेनम्मा

1857 के 'प्रथम स्वतंत्रता संग्राम' से पूर्व अंग्रेजों के खिलाफ देश के अनेक भागों में जो लड़ाईयाँ लड़ी गयीं और उनमें भारत की नारियों ने जो जौहर दिखाए, कित्तूर की रानी चेनम्मा उन वीरांगनाओं में एक अग्रणी नाम है।

23 अक्तूबर। दक्षिण भारत में यह दिन रानी

चेनम्मा की याद में उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए हर वर्ष 'महिला दिवस' के रूप में मनाया जाता है। 23 अक्तूबर 1824 को कित्तूर के किले पर अंग्रेजों की संगठित शक्ति को इस छोटे से राज्य की रानी ने ललकारा था। यद्यपि यह विजय भी बाद में पराजय में बदल गयी थी, पर कित्तूर की रानी चेनम्मा ने जिस साहस व शौर्य का परिचय दिया, उसकी याद में बेलगाँव को सौ वर्ष बाद 1924 का ''**भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस अधिवेशन-स्थल**'' चुना गया था।

कित्तूर मैसूर के उत्तरी भाग में बेलगाँव से कुछ ही मील दूर एक छोटा-सा नगर है। तब यह कर्नाटक क्षेत्र का एक प्रसिद्ध और स्वतंत्र राज्य था, जिसमें वर्तमान बेलगाँव, धारवाड़ और झारवार जिले का कुछ भाग शामिल था। कित्तूर तब इस राज्य का एक प्रसिद्ध व्यापारिक केन्द्र था, जहाँ हीरे-जवाहरात के बाजार लगते थे और दूर-दूर से व्यापारी आते थे। राज्य उन दिनों सुख-समृद्धि से भरपूर था और वहाँ शांति व न्याय का शासन था। इसीलिए प्रजा भी आज्ञाकारिणी व स्वामिभक्त थी।

कित्तूर का पश्चिमी भाग पर्वतों व घने जंगलों से घिरा था। इसलिए कित्तूर की रानी को अंग्रेजों की शक्ति से जूझते समय इस भौगोलिक प्रतिकूलता का भी सामना करना पड़ा। पर रानी चेनम्मा ने जिस साहस, शौर्य व राजनयिक सूझ-बूझ का परिचय दिया, उसकी मिसाल इतिहास में कम मिलती है।

चेनम्मा का जन्म 1778 में कित्तूर के काकतीय राजवंश में हुआ था। पिता थुलप्पा देसाई और माता पद्मावती ने अपनी कन्या का नाम चेनम्मा इसलिए रखा कि वह बहुत रूपवती थी। उसकी पढ़ाई-लिखाई भी राजकुमारों जैसी ही हुई- घुड़सवारी, आखेट, शस्त्र-चालन का प्रशिक्षण, युद्ध-कलाओं का अभ्यास भी जिसमें शामिल था। कन्नड़- मराठी, उर्दू व संस्कृत भाषाएँ भी चेनम्मा को सिखायी गयी। इसके साहस और बुद्धिमत्ता की ख्याति चारों ओर फैलने लगी, तो कित्तूर के राजा मल्ल सर्ज ने उसका हाथ माँग लिया। मल्ल सर्ज और चेनम्मा के विवाह के बारे में एक रोचक घटना प्रसिद्ध है : एक बार चेनम्मा ने शिकार खेलते हुए एक बाघ को निशाना बनाया। उसी समय उस जंगल में मल्ल सर्ज भी शिकार खेलने आया हुआ था। राजा मल्ल सर्ज ने भी एक बाघ पर निशाना साधा। अपने शिकार का पीछा करते हुए उसने देखा, एक सुन्दर युवती मरे बाघ के सिरहाने बैठी है। राजा ने समझा, यह उसी का शिकार है, जबकि वह बाघ चेनम्मा द्वारा मारा गया बाघ था। इसी बात को लेकर दोनों में तकरार हुई और चेनम्मा के रूप, सौन्दर्य व बुद्धिमत्ता से प्रभावित हो मल्ल सर्ज ने उसके साथ विवाह किया।

विवाह के बाद रानी चेनम्मा राज-काज में पति का हाथ बँटाने लगी। राजा मल्ल सर्ज धीर, गम्भीर, बहादुर, स्वाभिमानी और कला-प्रेमी थे। कित्तूर को सम्पन्न राज्य बनाने का सपना देख रहे थे कि पूना के पटवर्धन ने उन्हें बंदी बना लिया और बंदी रूप में ही 1816 में उनकी मृत्यु हो गयी। मल्ल सर्ज की बड़ी रानी थी रुद्रम्मा और छोटी थी चेनम्मा। चेनम्मा ही रूपवती, गुणवती होने से राज-काज सँभालने के योग्य थी। उसके एकमात्र पुत्र की अकाल मृत्यु हो गयी तो चेनम्मा ने शिवलिंग रुद्र सर्ज को अपना पुत्र मान गद्दी पर बैठाया और उसे राजकाज चलाना सिखाया।

शुरू में अंग्रेज उस शक्तिशाली राज्य को नाराज

नहीं करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने पेशवा से बचाकर कित्तूर की स्वाधीनता स्वीकार कर ली थी। पर 11 सितम्बर 1824 को शिवलिंग सर्ज का भी अल्पायु में निधन हो गया। उसकी विधवा की आयु केवल 11 वर्ष की थी। इसलिए मृत्यु से पूर्व शिवलिंग सर्ज ने अपने एक रिश्तेदार गुरुलिंग मल्ल सर्ज को गोद ले लिया था।

अंग्रेज तो ऐसे बहानों की खोज में रहते ही थे। उस समय कित्तूर में थैकरे नाम का एक अंग्रेज अधिकारी राजनीतिक एजेंट था। कित्तूर के खजाने में अथाह सम्पत्ति की अफवाह से उसकी नीयत खराब हो गयी। उसने कित्तूर के कुछ लालची सरदारों को रिश्वत देकर साथ मिला लिया और षड्यंत्र करके झूठी कहानी फैलाई कि शिवलिंग सर्ज द्वारा मरने से पहले कोई पुत्र गोद नहीं लिया गया। रानी को खतरे की गंध मिल गयी। उसने सर्वप्रथम अपने दत्तक पोते के औपचारिक राज्याभिषेक के लिए सार्वजनिक समारोह आयोजित किया और इस अवसर पर अंग्रेजों के विश्वासपात्र मित्रों को भी आमंत्रित किया। जनता की उपस्थिति में रानी के सलाहकार गुरु सिद्धप्पा ने उनसे कहा, 'यदि आप कित्तूर की स्वतंत्रता बनाए रखने में सहयोग देंगे, तो हम पिछली बातों को भुला फिर से आपको मित्र मान लेंगे। उपस्थित लोगों ने हथियार छू-छू कर कित्तूर की आजादी के लिए लड़ने की शपथ ली। इसके बाद रानी चेनम्मा के नेतृत्व में कित्तूर की जनता संगठित हो गयी। यह सब देखकर थैकरे बौखला गया। उसने रानी के महल में और महत्वपूर्ण पदों पर कम्पनी के आदमियों की नियुक्ति की। कित्तूर में अराजकता है, खजाने की बरबादी हो रही है, प्रजा पर अत्याचार किये जा रहे हैं, यह कहकर इस बहाने से उसने उनके खजाने पर अपने सैनिकों का पहरा बैठा दिया। पुराने अधिकारियों और प्रतिष्ठित सरदारों को अपमानित किया जाने लगा। रानी चेनम्मा ने सम्मानजनक संधि के लिए ऊपर के अधिकारियों को पत्र लिखे, साथ ही युद्ध की तैयारियाँ भी शुरू कर दीं।

21 अक्तूबर को थैकरे ने रानी चेनम्मा से भेंट के लिए समय माँगा। रानी ने अस्वस्थता के बहाने टाल दिया। थैकरे के उद्धत स्वभाव से सभी परिचित थे, इसलिए कोई सरदार भी उन्हें रानी के पास ले चलने को तैयार न हुआ। तब थैकरे ने सरदारों को डराने के लिए सैनिक बुला लिये। 22 अक्तूबर को थैकरे को किले का बाहरी दरवाजा बन्द मिला। चेनम्मा के नेतृत्व में सरदारों ने किले की रक्षा की पूरी तैयारी कर ली थी। 23 अक्तूबर को किले में प्रवेश करने में असफल रहने पर थैकरे ने किले के फाटक पर तोप लगा दी। किले के रक्षकों को फाटक खोलने के लिए 24 मिनट का समय दिया कि इतने समय में फाटक नहीं खुला, तो हम गोले बरसाकर इसे तोड़ देंगे।

समय समाप्त होने पर कैप्टन ब्लैव, कैप्टन सिलेब और लेफ्टिनेंट डायटन तोप चलाने के लिए आगे बढ़े कि फटाक से फाटक खुला और किले के सैनिकों ने धावा बोल तोप पर कब्जा कर लिया। अंग्रेज सैनिकों के टुकड़े हो गए। कित्तूर के सैनिकों ने चुन-चुनकर कम्पनी के सैनिकों व अपने गद्दार सरदारों यलप्पा शेट्टी और वेंकटराव का सफाया कर दिया। रानी स्वयं किले की प्राचीर से सैनिक कारवाई का संचालन कर रही थीं। थैकरे का घोड़ा जैसे ही फाटक के नजदीक पहुँचा, रानी के अंगरक्षक बालप्पा ने निशाना साध कर गोली चलाई। थैकरे घायल

होकर गिर पड़ा और बाहर लड़ रहे सैनिकों ने उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिए। कम्पनी के बाकी सैनिक जान बचा कर भाग गये। दो सेनाधिकारी स्टीवेन्सन और इलियट पकड़ लिये गये।

इस शिकस्त से कम्पनी की प्रतिष्ठा को भारी धक्का लगा। रानी चेनम्मा ने थैकरे की इस करतूत की जाँच करने व रानी के साथ न्याय करने की माँग की और लिखा कि कित्तूर की आजादी का पूर्ववत् सम्मान किया जाये, तो इलियट और स्टीवेन्सन को छोड़ दिया जाएगा। उत्तर देने के बजाय अंग्रेजों ने छः महीने तक जमकर अगले आक्रमण की तैयारी कर ली। दक्षिण की सभी छावनियों से सैनिक और हथियार मँगा लिये और 30 नवम्बर को कित्तूर को घेर लिया। 2 दिसम्बर को चैपल ने आश्वासन दिया कि इलियट और स्टीवेन्सन को छोड़ दिया जाए, तो हमला नहीं किया जाएगा। रानी ने खून-खराबा बचाने के लिए बंदियों को मुक्त कर दिया। परन्तु अंग्रेजों ने वचन का पालन न कर विश्वासघात किया।

3 दिसम्बर को बड़ी तोपों से किले पर गोलाबारी शुरू कर दी गयी। इस छोटे से किले को जीतने के लिए 200 भारी तोपों का प्रयोग किया गया। चौबीस घंटों की लगातार गोलाबारी के बाद किले की दीवार में दरार पड़ गयी। उधर भेदियों और जासूसों ने किले की बारूद नष्ट करवा दी। रानी के विश्वासपात्र सेनापति गुरु सिद्धप्पा ने अंतिम क्षण तक किले की रक्षा की। पर अपने कुछ साथियों के विश्वासघात के कारण अंग्रेजी सेना की रक्षा-पंक्ति के आगे हार स्वीकार करनी पड़ी। पाँच दिसम्बर को रानी चेनम्मा और उनकी पुत्रवधू जानकीबाई को बंदी बना लिया गया। कित्तूर पर से अधिकार छोड़ने के पत्र पर उनसे जबरदस्ती हस्ताक्षर कराये गए और फिर उन्हें वापस बेलगाँव के दुर्ग में नजरबंद कर दिया गया।

1929 में कित्तूर की जनता ने एक बार फिर विद्रोह का झंडा उठाया। रानी को बेलगाँव किले से निकालकर धारवाड़ ले जाते समय लोगों ने किले को घेर उन्हें छुड़ाने की कोशिश की, पर व्यर्थ, संगीनों की नोक पर लोगों को हटाकर रानी धारवाड़ ले जाई गयीं। यहीं 2 फरवरी 1829 को जेल में रानी चेनम्मा की मृत्यु हुई। उसी वर्ष 20 जुलाई 1829 को उनकी पुत्रवधू जानकीबाई जेल में ही चल बसीं। अंग्रेजों के मन में इस छोटे-से राज्य द्वारा किये गये प्रबल विद्रोह का इतना आतंक बैठ गया था कि उन्होंने कित्तूर राज्य को तीन टुकड़ों में बाँट दिया और 1829 को विद्रोहियों के नेता सिद्धप्पा को फाँसी पर चढ़ा दिया।

इस बलिदान की याद में रानी चेनम्मा का महल अब एक संग्रहालय है। उनकी समाधि पर एक 'वृत्तांत' के लिए मैसूर के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री एस0 निजलिंगप्पा ने 2 अक्तूबर 1966 को तीस हजार खर्च कर बनने वाले 'वृत्तांत' का शिलान्यास करते हुए कहा था, ''रानी के दिए बलिदान के कारण उनके प्रति कृतज्ञ रहना हमारा कर्त्तव्य है।'' 10 जनवरी 1967 को कित्तूर में रानी चेनम्मा की याद में बने एक महिला विद्यालय का शिलान्यास प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी के हाथों हुआ। इस अवसर पर उनकी याद में एक डाक-टिकट भी जारी किया गया। रानी चेनम्मा की वीरगाथा आज भी कर्नाटक के घर-घर में गायी जाती है।

●

सामान्य रोगों की सुगम चिकित्सा

– डा० अजीत मेहता

उच्च रक्त चाप (High Blood Pressure)

प्याज का रस और शुद्ध शहद बराबर मात्रा में मिलाकर नित्य दो चम्मच दस ग्राम (दो चम्मच) की मात्रा में दिन में एक बार लेना अधिक रक्तचाप का प्रभावशाली इलाज है।

विशेष– प्याज का रस खून में कोलेस्ट्रोल की मात्रा को कम करके दिल के दौरे को रोकता है। प्याज स्नायु-संस्थान (नर्वस सिस्टम) के लिए टॉनिक, खून साफ करने वाला, पाचन में सहायक और हृदय की क्रिया को सुधारने वाला तथा अनिद्रा को रोकने वाला है। शहद शरीर पर शामक प्रभाव डालकर रक्तवाहिनियों की उत्तेजना घटाकर और उनको सिकोड़कर उच्च रक्तचाप घटा देता है। शहद के प्रयोग से हृदय सबल व सशक्त बनता है। 5-7 दिन लेकर देखें। लाभ होने पर आवश्यकतानुसार कुछ दिन और लें।

विकल्प– (1) तरबूज के बीज की गिरी और खसखस (सफेद) अलग-अलग पीसकर बराबर वजन मिलाकर रख लें। तीन ग्राम (एक चम्मच) की मात्रा से प्रातः सायं खाली पेट जल के साथ लें। इससे रक्तचाप कम होता है और रात में नींद अच्छी आती है। सिर दर्द भी दूर हो जाता है। तरबूज के बीज की गिरी खाते रहने से रक्तचाप कम हो जाता है। कोलेस्ट्रोल पिघलकर पतला होकर निकलने लगता है। रक्तवाहिनियों की कठोरता घटने लगती है और उनकी रचना में खराबी आनी रुक जाती है। वे मुलायम और लचकीली बनने लगती हैं। आवश्यकतानुसार 3-4 सप्ताह तक लें। (2) तीन ग्राम (एक चम्मच) मेथी (शुष्क दाना) के चूर्ण की फक्की सुबह-शाम खाली पेट 10-15 दिन पानी के साथ लेने से उच्च रक्तचाप कम होता है। इससे मधुमेह में भी लाभ होता है। (3) खाना खाने के बाद कच्चे लहसुन की एक-दो फांकें छीलकर टुकड़े कर पानी के साथ चबा लें अथवा एक दो बीज निकाली हुई मुनक्का में लपेट कर चबा लें। इससे उच्च रक्तचाप मिटता है। लहसुन की ताजा कलियाँ बढ़े हुए रक्तचाप को कम कर साधारण संतुलित अवस्था में रखने में सक्षम होती हैं। एक कली वाली लहसुन एक नग लेना अधिक अच्छा रहता है। **लहसुन खाने की कारगर विधि–** प्रातः खाली पेट लहसुन की दो-तीन कलियों को छील लें। फिर प्रत्येक कली के तीन-चार टुकड़े कर थोड़े पानी के साथ प्रातः खाली पेट चबा लें या उन टुकड़ों को पानी के घूँट के साथ निगल लें। इस विधि से कच्चे लहसुन का सेवन रक्त में कोलेस्ट्रोल की मात्रा शीघ्रता

से घटाने, रक्तचाप कम करने और ट्यूमर बनने से रोकने में बेजोड़ है।

सहायक उपचार– (1) गेहूँ और चना बराबर मात्रा में लेकर आटा पिसवायें। चोकर सहित आटे की रोटी बनायें और खायें। एक-दो दिन में ही उच्च रक्तचाप में सुधार प्रतीत होगा। (2) रात में ताँबे के बर्तन में रखा हुआ पानी प्रातः पीने से उच्च रक्तचाप कम होता है और इसके नियन्त्रण में सहायता मिलती है। (3) चार तुलसी की पत्तियाँ, दो नीम की पत्तियाँ दो-चार चम्मच पानी के साथ घोटकर पांच-सात दिन सबेरे खाली पेट पीने से उच्च रक्तचाप में लाभ होता है। (4) सबेरे खाली पेट डाल का पका पपीता एक मास तक खाएँ और इसके खाने के बाद दो घण्टे कुछ न खाएँ-पीएँ। इससे उच्च रक्तचाप ठीक होता है। (5) प्याज और लहसुन का उपयोग यदि भोजन के साथ संतुलित मात्रा में किया जाये तो हृदय रोगों के निवारण और चिकित्सा में लाभ पहुँचने की सम्भावना रहती है। प्याज और लहसुन का सेवन करने से रक्त में रक्त पैत्तव (कोलस्ट्रोल) की मात्रा अधिक नहीं बढ़ पाती है क्योंकि इनमें फिब्रिनोलाइटिक तत्त्व होने के कारण रक्तविकारजन्य रक्त के जमाव को कम करते हैं तथा रक्त को घुलाने में सहायता देते हैं और जमे हुए रक्त को भी पिघलाकर साधारण अवस्था में ला देते हैं। (6) **उच्च और निम्न दोनों प्रकार के रक्तचाप में लाभप्रद–** (क) छाछ पीने से लाभ पहुँचता है। निम्न रक्तचाप वाले छाछ में दो ग्रेन हींग मिलाकर सेवन करें। दिन के भोजन के पश्चात् एक गिलास छाछ पीना अमृत तुल्य है। (ख) छाछ की भाँति चौलाई की सब्जी या रस भी दोनों प्रकार के रक्तचाप में लाभदायक है।

(ग) नंगे पैर 5-6 किलोमीटर घूमना या हरी घास में 10-15 मिनट टहलना, प्रतिदिन पर्याप्त व्यायाम करने व खुश रहने से रक्त में कोलेस्ट्रोल की मात्रा को नियंत्रित करने में सहायता मिलती है। मन को शान्त एवं प्रसन्नचित रखना उच्च रक्तचाप का प्रभावी उपचार है। (घ) सप्ताह-पन्द्रह दिन में एक दिन का उपवास रखना भी हितकर सिद्ध होता है। इससे ब्लड प्रेशर में कमी आती है। (ङ) पंचमुखी रुद्राक्ष पहनने से उच्च रक्तचाप में लाभ होता है। यह रक्तवाहिनियों के कठोर और मोटा होने की दशा में भी लाभ करता है। ध्यान रहे इसका त्वचा से स्पर्श करते रहना आवश्यक है।

उच्च रक्तचाप में तात्कालिक लाभ के लिये– उच्च रक्तचाप में 100 ग्राम (आधा कप) पानी में आधा नीबू निचोड़ कर दिन में दो-तीन बार दो-दो घण्टे पर पीने से तुरन्त लाभ होता है।

विशेष– इसके प्रयोग से रक्तवाहिनियों की कठोरता दूर होकर उनमें लचक और कोमलता आती है। नीबू हृदय को शक्ति देता है और इसके नियन्त्रित सेवन से हार्ट-फेल का भय नहीं रहता।

विकल्प– (1) शवासन- उचित ढंग से शवासन (शिथिलीकरण) का अभ्यास उच्च रक्तचाप के रोगी के लिये एक वरदान से कम नहीं है।

विकल्प– (2) बाएँ स्वर का प्रयोग– यदि कोई व्यक्ति बायाँ (Left) स्वर (अर्थात् बाएं नासिका छिद्र से साँस चलना) लगातार आधा घण्टा चलाएं तो उच्च रक्तचाप कम हो जाता है। अभ्यास से इच्छानुसार स्वर बदला जा सकता है। कुछ देर दायीं करवट (हाथ का तकिया बनाकर सिर के नीचे रखकर सोने) लेटने से बायां स्वर चलने लगता है। इच्छानुसार स्वर बदलने का एक सहज उपाय यह है कि जिस नासिका छिद्र से स्वर चलाना है उसके दूसरी तरफ के नासिका छिद्र में रुई ठूँस दें। कुरसी पर बैठे हैं तो एक तरफ जोर देने या झुकने मात्र से, और यदि खड़े हैं तो एक पैर की एड़ी ऊँची करके दूसरे पैर पर जोर देने से, जिस तरफ जोर पड़ता है उसके दूसरी तरफ की नासिका छिद्र का स्वर चलने लगता है।

निम्न रक्तचाप (Low Blood Pressure **)**

32 किशमिश किसी चीनी के कप में 150 ग्राम पानी में भिगो दें। बारह घण्टे भीगने के बाद प्रातः एक-एक किशमिश खूब चबा-चबाकर (प्रत्येक किशमिश को बत्तीस बार चबाकर) खाने से निम्न रक्तचाप में बहुत लाभ होता है। पूर्ण लाभ के लिये बत्तीस दिन खायें। एक महीना व्यवहार करने से देह से रोग-विष शीघ्र बाहर हो जाता है। लौह तत्व से भरपूर क्षार श्रेणी का खाद्य होने के कारण यह खून तथा देह के तन्तुओं को साफ रखता है।

विशेष– (1) निम्न रक्तचाप या हृदय-दुर्बलता के कारण मूर्छित हो जाने पर हरे आँवलों का रस और शहद बराबर-बराबर दो-दो चम्मच मिलाकर चटाने से होश आ जाता है और हृदय की कमजोरी दूर हो जाती है। (2) निम्न रक्तचाप में बादाम का सेवन बड़ा उपयोगी है। नित्य 7 बादाम गिरी रात को पानी में भिगोकर प्रातः खूब बारीक पीसकर दूध के साथ प्रयोग करने से निम्न रक्तचाप कुछ ही दिनों में सामान्य हो जाता है और दिल को भी ताकत मिलती है। (3) **निम्न रक्तचाप में तात्कालिक लाभ के लिए–** बोलना बन्द कर दें। चुपचाप बांयी करवट लेट जायें नींद आने से ठीक हो जाएगा।

पीलिया (Jaundice **)**

पीपल-वृक्ष के तीन-चार नये पत्ते (कोंपलें), पानी से साफ करके, मिश्री या चीनी के साथ खरल में खूब घोंटें या सिल पर बारीक पीस लें। एक गिलास (250 ग्राम) पानी में घोलकर किसी स्वच्छ कपड़े से छान लें। यह पीपल के पत्तों का शर्बत पीलियाग्रस्त रोगी को दिन में दो बार पिलाएं। आवश्यकतानुसार तीन दिन से सात दिन तक दें। पीलिया से छुटकारा मिल जाएगा।

विशेष– (1) यह पीलिया रोग का सरल व सफल इलाज जयपुर के श्री सौभाग्यमल जी बेंगानी

द्वारा स्वानुभूत है। उन्होंने लिखा है– ''कुछ साल पहले मुझे पीलिया हुआ था। एलोपैथिक इलाज चालू था परन्तु महीने भर से ठीक होने का नाम न ले रहा था। एक बार पीलिया बिगड़ चुका था और दूसरी बार बिगड़ने (रीलेप्स होने) की सम्भावना थी। इलाज रोककर मैंने गाँव के किसी अनुभवी व्यक्ति की सलाह पर उपरोक्त पीपल के पत्तों का शरबत बनाकर लिया और सप्ताह भर में बिल्कुल अच्छा हो गया। हाँ, पथ्यापथ्य के पालन पर ध्यान अवश्य रखा। फिर मैंने कई अन्य व्यक्तियों पर वही प्रयोग किया और समान रूप से लाभकारी पाया। एक बार 5-6 दिन के नवजात शिशु के पीलिया में भी पीपल का एक कोमल पत्ता लेकर मिश्री मिलाकर, पीसकर कपड़े से छान लिया और तैयार शर्बत को निप्पल वाली बोतल में भरकर दे दिया। इस प्रकार कुछ ही खुराक से वह बच्चा दो-तीन दिन में ठीक हो गया। (2) हल्का और सुपाच्य भोजन लें और पूर्ण विश्राम करें। स्वच्छ, शीतल, हवादार मकान में रहें। (3) पीलिया में साधारण जुलाब लेकर औषधि सेवन करना अच्छा रहता है, जैसे- त्रिफला पानी।

विकल्प– मूली के पत्तों और टहनियों का रस 50 ग्राम में 10 ग्राम मिश्री मिलाकर प्रातः खाली पेट पीने से सब प्रकार के पीलिया में लाभ होता है और इससे एक सप्ताह के भीतर पीलिया रोग दूर हो जाता है।

सहायक उपचार– (1) लिव-52 टैबलेट्स (हिमालय ड्रग्स कम्पनी की आयुर्वैदिक पैटेंट औषधि) गोली दिन में तीन बार लेने से पीलिया में शीघ्र लाभ होता है। (2) सबेरे निराहार मुख दो संतरे रोज खाने या संतरे का रस पीने से पांच-सात दिन में कई बार, रोग समूल नष्ट होते देखा गया है। (3) छाछ एक गिलास में एक चुटकी काली मिर्च मिलाकर एक सप्ताह तक लें। (4) एक कप पानी में एक चम्मच ग्लूकोज डालकर सुबह-दोपहर और रात में पीने से लाभ होता है। (5) सफेद बोतल में तीन चौथाई पानी भरकर धूप में 6 से 8 घंटे रख देने के बाद ठंडा होने पर तैयार पानी के पीने से पानी के दोष समाप्त हो जाते हैं और पीलिया में यह सफेद बोतल का पानी विशेष लाभप्रद सिद्ध होता है। (6) पोदीने का रस निकालकर सुबह चीनी मिलाकर पीना पीलिया में गुणकारी है। दस दिन लें।

पीलिया की पहचान और लक्षण

जिस व्यक्ति की आँखें, त्वचा, नख, मुँह आदि हल्दी की तरह पीले हो जाएं, मूत्र भी पीले रंग का आए, शरीर में शिथिलता और कमजोरी अधिक प्रतीत हो, दाह, अन्न से अरुचि आदि से जो विशेषतया पीड़ित हों तो समझ लें कि उसे पीलिया हो गया है।

पीलिया में मन्द ज्वर 99 से 100 तक रहता है। नाड़ी मन्द और क्षीण हो जाती है। यह रोग पित्त

की अधिकता से होता है (बाहरी कारणों में दूषित पानी एवं खाद्य पदार्थों के सेवन से भी होता है) और रोगी के मल का रंग सफेद या पीला होता है। अग्नि मंद हो जाती है। भूख नहीं लगना, मुँह का स्वाद कडुआ या बेस्वाद रहना, मुँह सूखना मिचली, पेट फूलना, गैस बनना, कई बार शरीर में खुजली होना, हाथ-पैरों का टूटना, ज्वर-भाव के साथ दिन-प्रतिदिन कमजोरी बढ़ती जाती है। जीर्ण पीलिया में चक्कर, भयानक खुजली विशेषकर रात में, सिर दर्द, स्मृतिहीनता, उत्साहनाश, नींद में कमी, पित्त खून में मिलकर रक्त को विषाक्त करना यकृत और प्लीहा का बढ़ना व कड़ा पड़ जाना आदि उल्लेखनीय हैं।

पीलिया के पथ्य-अपथ्य

परहेज– घी, तेल, हल्दी, लाल मिर्च और गर्म मसालों से बनी चीजें, अचार, सम्पूर्ण खट्टे पदार्थ न खाएँ। थोड़ी मात्रा में गाय का मक्खन लिया जा सकता है। राई, हींग, तिल, गुड़, बेसन, कचालू, अरबी न लें। चने और उड़द की दाल, उड़द और मैदे के भोज्य पदार्थ, केक, तले हुए पदार्थ, पित्त पैदा करने वाली और जलन करने वाली चीजों का सेवन बन्द कर दें। धूप में घूमना, आग के पास बैठना, परिश्रम के काम करना, अधिक पैदल चलना और क्रोध, तनाव, सम्भोग आदि से बचें। धूम्रपान, शराब, माँस, मछली, चाय एवं मादक पदार्थों का सेवन न करें। अशुद्ध पानी और अशुद्ध व बासी खाद्य-पदार्थों का प्रयोग न करें।

पथ्य– (1) पीलिया में गन्ने का रस लेना सर्वोत्तम है। बशर्ते कि रस अच्छे और साफ गन्ने का स्वच्छता से बनाया हुआ हो। प्रातः गन्ने या नारंगी का रस लिया जा सकता है। (2) संतरे का रस, कच्चे नारियल या डाभ का पानी, जौ का पानी, बेदाना (मीठा अनार) का रस, मूली के पत्तों का रस, फटे दूध का पानी, दही का तोड़, काली मिर्च व जीरा नमक मिलाकर पतली छाछ पीना हितकारी है। दूध यदि लें तो दूध में बराबर पानी मिलाकर और कुछ दाने सौंफ के डालकर अथवा 1-2 दाने छोटी पीपर डालकर अथवा एक ग्राम सोंठ का चूर्ण मिलाकर, लोहे की कड़ाही में गर्म किया हुआ दूध अच्छा रहता है। (3) **भोजन–** खाने में पुराने गेहूँ और जौ की रोटी बिना घी की दें। चावल, खिचड़ी न दें। दलिया दे सकते हैं। पीलिया में जौ का सत्तू लेना और ऊपर से गन्ने का रस पीना अधिक लाभदायक रहता है। मूंग की दाल का पानी लें अथवा बिना मसाले की मूंग की दाल में काला नमक व काली मिर्च मिलाकर लें। मूंग, मसूर, अरहर का यूष भी पथ्य है। पीलिया होते ही कम-से-कम आठ दिन तक खटाई, लाल मिर्च व मसाले वाली चीजें तथा चिकनाई युक्त आहार का त्याग करने से जल्दी लाभ होगा। ●

'स्वदेशी चिकित्सा सार'
पुस्तक से साभार

हम भारत से क्या सीखें?

द्वितीय भाषण

– प्रो० मैक्समूलर

हिन्दुओं का चरित्र–

(पूर्व अंक का शेष)

उन्होंने अपने भारतीय मित्रों, सहकारियों एवं कर्मचारियों की चारित्रिक विशेषता के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है, उसे आप सबके सामने पढ़ने के लोभ का मैं संवरण नहीं कर पा रहा हूँ :–

''यह आवश्यक भी था और मुझे पसन्द भी कि मैं भारत में हिन्दुओं के बीच में रहूँ। इस प्रकार मुझे उन्हें इतनी अधिक विभिन्न परिस्थितियों में देखने एवं परखने के अवसर मिले कि किसी भी अंग्रेज को उतनी अधिक परिस्थितियों में देखने-परखने के अवसर नहीं मिल सकते। **कलकत्ता के टकसाल में मुझे नित्य ही भारतीय मिस्त्रियों, कारीगरों एवं अनेक छोटे बड़े कर्मचारियों के व्यक्तिगत सान्निध्य में आना पड़ता था। मैंने जब कभी भी भारतीयों को देखा, उन्हें निरन्तर कार्यरत व हँसमुख देखा। उनके अथक परिश्रम, निरन्तर अध्यवसाय एवं सदा प्रसन्न मुख को मैं कभी भी नहीं भूलूँगा। अपने उच्चाधिकारियों का मन्तव्य वे** (भाषा साम्य न होते हुए भी) **कितनी जल्दी जान लेते थे और जान कर कितनी शीघ्रता तत्परता से वे पालन करते थे कि देख कर आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता था। जो कुछ भी उनसे कहा जाता था उसे करने को वे प्राणपण से तैयार रहते थे। वे मद्यप नहीं थे, व्यवस्था प्रेमी और आज्ञानुवर्ती थे।** यह कहना सत्य नहीं होगा कि उनमें बेईमानी नहीं थी। थी, अवश्य थी, पर उतनी नहीं, जितनी अन्य देशों की टकसालों के कर्मचारियों में होती है। ये बेईमानियाँ नगण्य थीं और बहुत कम थीं सरलता से इन्हें दूर किया जा सकता था। दूसरे देश की टकसालों में जिस प्रकार की सुरक्षा व्यवस्था एवं अपराधनिरोधक व्यवस्था की आवश्यकता पड़ती है, उस प्रकार की किसी भी व्यवस्था की आवश्यकता यहाँ नहीं प्रतीत होती थी। उनमें कौशल भी था और सीखने की अदम्य इच्छा भी। प्रशंसा की बात तो यह है कि यह सब कुछ होते हुए भी उनमें गुलामों की सी भावना का नाम तक नहीं था, जैसे सब कुछ वे स्वेच्छया ही करते थे न कि किसी दबाव या भयवश। दास भावना के एकदम विपरीत उनमें शिष्ट स्पष्टवादिता की भावना अधिक प्रबल थी। किन्तु इन सब गुणों का दर्शन तभी सम्भव होता था जब अपने अफसर में उनका पूर्ण विश्वास रहता था और उसके साथ उनको यह भी विश्वास हो जाता था कि अनुचित भय की कोई बात नहीं है। भारतीय चरित्र में स्पष्टवादिता एक महान् गुण के रूप में विकसित हुई है। एक बार आप उनको आश्वस्त कर दें कि आप उनके हास परिहास को अन्यथा न समझेंगे, फिर देखिये उनका सारा गाम्भीर्य हवा हो जायगा और वे अपनी प्रसन्नतापूर्ण वाणी से आपको भी प्रसन्न बना देंगे। प्रशंसा की बात तो यह है कि उनके इस आह्लादपूर्ण हासपरिहास में अशिष्टता या असौजन्य का नाम भी न दिखायी पड़ेगा।''

भारतीय पंडितों की बुराई करने में किसी भी विदेशी ने एक भी पत्थर को बिना पलटे नहीं छोड़ा है, परन्तु उन्हीं पंडितों के विषय में प्रोफेसर विल्सन लिखते हैं कि

''अपने खाली समय में मैं जिस विषय का अध्ययन करता था, उसके कारण मुझे भारतीय विद्वानों के सम्पर्क में आना पड़ा। इन पंडितों में भी मैंने उसी अध्यवसाय, बुद्धि प्रखरता, स्पष्टवादिता एवम् उनकी विद्वत्ता के विरुद्ध चित्तानुरंजकता का दर्शन किया। उनके मुख पर जैसे सदैव ही बालकोचित हास्य खेला करता था। उनकी वाणी में ओज एवम् माधुर्य का अद्‌भुत सम्मिश्रण होता था। इन भारतीय विशेषकर हिन्दू विद्वानों में मैंने अद्‌भुत सादगी देखी। इनकी सादगी शिशुत्व की सादगी को पहुँची हुई प्रतीत होती थी, जैसे उन्हें जीवन के कार्य व्यवहारों एवम् शिष्ट आचारों का कोई विशेष ज्ञान ही न हो। यदा कदा भारतीय विद्वानों में मुझे इस सादगी के अभाव के भी दर्शन हुए, उनमें सभ्य समाज की-सी बनावट भी हमने यत्र तत्र देखा परन्तु शीघ्र ही पता चल गया कि यूरोपियनों के संसर्ग ने इन्हें शिशुत्व से यौवन में खड़ा कर दिया है। भारतीय विद्वान् विशेष कर हिन्दू धर्म वाले। विद्वान् यूरोपियन चरित्र को समझ भी नहीं पाते और उनसे त्रस्त भी रहते हैं। भारत में रहने वाले जो एकाध यूरोपीय विद्वान् हैं भी, वे इन पंडितों से अलग-अलग रहते हैं। उनका इन भारतीय विद्वानों से कोई भी सम्पर्क नहीं है और परिणामतः दोनों ही एक दूसरे से अनभिज्ञ हैं। केवल यही एक मात्र कारण है कि दोनों (भारतीयों तथा यूरोपियनों) में एक दूसरे के प्रति अत्यन्त भ्रान्त धारणाएँ बद्धमूल होती जा रही हैं।''

अन्त में कलकत्ता के उच्चवर्गीय भारतीयों के विषय में लिखते हुए प्रोफेसर विल्सन का कथन है कि– ''उन्हें इन भारतीयों में अनुपम शिष्टाचरण, स्पष्टता एवम् अद्‌भुत ज्ञान-पिपासा के साथ-साथ अनुभव एवम् सिद्धान्त की अतीव स्वतंत्रता के दर्शन किये।'' प्रोफेसर साहब तो यहाँ तक कहते हैं कि– ''उन्हें भारतीयों में ऐसे व्यक्ति मिले जो संसार के प्रमुख सभ्य देशों के सभ्यतम पुरुषों की श्रेणी में रखे जाने योग्य थे।'' उन्होंने आगे चल कर लिखा है कि– ''उनमें से अनेकों से मेरी मित्रता हुई और मुझे विश्वास है कि उनकी मित्रता का रसास्वादन मैं यावज्जीवन करता रहूँगा।''

मैं प्रायः प्रोफेसर विल्सन को भारतीयों के विषय में उपरोक्त प्रकार के और कभी-कभी तो उनसे भी सबल शब्दों में बोलते हुए सुना है। यदि आप उस प्रकाशित पत्रावली को देखें जो श्री विल्सन एवम् श्री केशव चन्द्र सेन के पितामह रामकमल सेन के बीच हुई थी तो आप भी कहेंगे कि भारतीयों के साथ अंग्रेज अटूट मैत्री बन्धन में बँध सकते हैं। हाँ आवश्यकता इस बात की है कि इस प्रकार की मित्रता सम्पादन की भावना पहले अंग्रेजों की ही तरफ से होनी चाहिये।

संस्कृत के ही एक अन्य प्रोफेसर भी हैं जिन पर विश्वविद्यालय को गर्व हो सकता है और जो वर्त्तमान विषय पर बोलने के लिये मुझसे कहीं बड़े अधिकारी हैं, वे भी आपसे इसी प्रकार की बातें कहेंगे और इसमें सन्देह नहीं है कि उन्होंने प्रायः आपसे ऐसा कहा भी होगा कि यदि मित्रता सम्पादन करने की दृष्टि से हिन्दुओं में योग्य व्यक्तियों की खोज की जाय तो उनमें इस योग्य अनेक व्यक्ति मिलेंगे कि उनसे मित्रता की जाय और उनका पूर्ण विश्वास भी किया जाय। ●

हिन्दी अनुवाद– **श्री कमलाकर–रमेश तिवारी**

(शेष अगले अंक में)

पाणिनि कन्या महाविद्यालय में सहयोग करने का प्रकार

1. आप **5 हजार रुपये** देकर विद्यालय के **वार्षिक सदस्य** बन सकते हैं।
2. आप एक कन्या को पढ़ाने में सहयोग कर सकते हैं **वार्षिक 18 हजार** रुपये **छात्रवृत्ति** देकर।
3. इस समय कन्याओं को सिलाई-कढ़ाई के प्रशिक्षण हेतु लगभग **10 सिलाई मशीनों** की आवश्यकता है।
4. महाविद्यालय में **गोशाला** भी है आप **21 सौ रुपये** प्रदान कर गोशाला के वार्षिक सदस्य बन सकते हैं।
5. आप विद्यालय के **प्रकाशन विभाग** में **10 हजार रुपये** का छोटा सहयोग दे सकते हैं जिनसे हम कुछ छोटी पुस्तकों का पुनः प्रकाशन करना चाहते हैं।
6. आप अपने बच्चों के जन्मदिन या माता-पिता की पुण्यतिथि व पर्व आदि पर **विशेष भोजन** करा सकते हैं **8 हजार रुपये** अर्पित करके।
7. आप कन्याओं को एक दिन का **जलपान** करा सकते हैं **15 सौ रुपये** देकर।
8. आप विशेष अवसरों पर **अन्न दान** (गेहूँ, चावल, दाल, घी, तेल आदि) कर सकते हैं।
9. कन्याओं के लिए **पुस्तक**, **कापी**, **वस्त्र** आदि के निमित्त वार्षिक सहयोग भी दे सकते हैं **5 हजार रुपये** अर्पित करके।
10. अभी हमने इसी वर्ष **10 शौचालय** व **6 स्नानागार** का निर्माण किया है जिसका व्यय **1 लाख रुपये** से ऊपर जा रहा है।
11. शुद्ध जल की व्यवस्था हेतु हमने **80 हजार रुपये** व्यय करके एक नई **बोरिंग** करायी है। पिछले दिनों परीक्षण में पाया गया कि यहाँ के जल में टी.डी.एस. की मात्रा अत्यधिक है।
12. कन्याओं के **खेल-कूद** से सम्बन्धित विभिन्न उपकरण झूला आदि तथा शूटिंग व धनुर्विद्या के प्रशिक्षण हेतु **1 लाख रुपये** की अपेक्षा है।

एतदर्थ **पाणिनि कन्या महाविद्यालय, वाराणसी** इस नाम से आप चेक या ड्राफ्ट के रूप में अपना सहयोग भेज सकते हैं एवं **महर्षि पाणिनि मन्दिर निर्माण समिति** खाता संख्या– 30121859712 शाखा– शिवाजी नगर भारतीय स्टेट बैंक वाराणसी में जमा भी कर सकते हैं। आपका सहयोग हमारे लिये बहुमूल्य है। **यह संस्था आयकर मुक्त है।** जिसका पूरा लाभ दानदाता उठा सकते हैं।

पाणिनि कन्या महाविद्यालय एक परिचय एवं प्रवेश के नियम–

श्री जिज्ञासु स्मारक पाणिनि कन्या महाविद्यालय की संस्थापना कन्याओं में आर्ष पाठविधि अष्टाध्यायी-महाभाष्य तथा वैदिक संस्कृति के प्रचार एवं प्रसार के महान् उद्देश्य एवं लक्ष्य से की गयी है। सन् 1971 जून मास में वाराणसी के तुलसीपुर स्थित एक छोटे से स्थान में इस विद्यालय का जन्म हुआ था। इसकी संस्थापिका आचार्या डा. प्रज्ञा देवी व उनकी अनुजा आचार्या मेधा देवी जी का ही यह व्रत था कि कन्याओं को वेद-वेदांग की शिक्षा से सुभूषित किया जाये। कन्याओं को बौद्धिक, शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक धरातल संपुष्ट तथा विकसित हो इसकी पूर्ण चेष्टा इस विद्यालय में रहती है। एतदर्थ विद्यालय में शास्त्र ज्ञान के अतिरिक्त शस्त्रास्त्र संचालन, व्यायाम, योगासन, प्राणायाम, शास्त्रीय संगीत आदि की नियमित शिक्षा भी दी जाती है। नगण्य साधनों से संस्थापित यह विद्यालय आज प्रभु कृपा से बहुविध उपलब्धियाँ प्राप्त कर चुका है। इस विद्यालय का ध्येय कन्याओं की संख्या बढ़ाना नहीं है अपितु थोड़ी कन्यायें रखकर उन्हें पूर्ण विदुषी सुदक्षा बनाना है। इस विद्यालय में अध्ययन करने हेतु उसी कन्या का प्रवेश हो सकता है जो माता-पिता द्वारा सुसंस्कारित, बुद्धिमती हो। तथा विद्यालयीय अनुशासन में रहती हुई अध्ययन के लिए पूर्ण संनद्ध हो।

<u>प्रवेश के नियम-</u>

1. यहाँ जून के अन्तिम सप्ताह (25-30 जून) में प्रवेश होता है।
2. यहाँ पाँचवीं या छठी पास 10 से 11 वर्ष की कन्या का ही प्रवेश होता है।
3. यहाँ वार्षिक शुल्क 18 हजार रुपये है।
4. यहाँ प्रवेश परीक्षा होती है। जिसमें पूर्व कक्षाओं में पठित गणित, अंग्रेजी व सामान्य ज्ञान की लिखित व मौखिक परीक्षा होती है। प्रवेश के लिये 60 प्रतिशत अंक प्राप्त करना अनिवार्य है।
5. यहाँ महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान उज्जैन की छः वर्षीय वेद परीक्षायें दिलायी जाती हैं। कन्याओं को परम्परागत सस्वर वेद पढ़ाने के इच्छुक अभिभावक एतदर्थ पृथक् रूप से सम्पर्क कर सकते हैं।

निवेदिका–

आचार्या नन्दिता शास्त्री
मो0– 9235539740

डा. प्रीति विमर्शिनी
मो0– 9235604340